41
JOS

पुस्तक वर्धन कार्यालय
१/१४३, [illegible]
काठमाडौं

नं० ११५

क. प्र ६४

2:41
JOS.

विश्वविद्यालय
UNIVERSITY
INCORPORATED
KATHMANDU NEPAL

श्री विश्वनाथो विजयतेतराम्।

ॐ

उत्तरकाशी माहात्म्य।

(भाषा टीका सहित)

प्रकाशक—

पं० सूरतराम जोशी वैद्य भूषण

उत्तरकाशी, टिहरी गढ़वाल।

नं. ११५

समर्पण

उत्तरकाशी महात्म्य जो स्कन्द पुराण केदार खंड से प्रायः हिन्दू जनता के लाभार्थ विशेष कर यात्री गंगोत्री यमुनोत्री के हित के लिये बड़े प्रेम परिश्रम से उधृत किया गया है श्री १०८ बाबा काला कमली वाले रामनाथ जी क्षेत्र ऋषीकेश के वर्तमान संचालक श्री बाबा मनीराम जी काली कमली वालों के चरणों में उस अलौकिक सेवा धर्म के उपलक्ष में जोकि आप यात्री गणों तथा तीर्थों के निमित्त स्तम्भ स्वरूप तन मन धन सहित रात दिन कर रहे हैं सविनय महर्ष सप्रेम समर्पित करता हूं ।

भवदीय

पंडा सूरतराम जोशी, वैद्यभूषण

उत्तरकाशी ।

सम्मति ।

श्रीमन्तः सुरतराम शर्म्माणो वेदपाठिन आयुर्वेद भूषण महोदयाः सुयोग्या विद्वांससन्ति शुभे श्री उत्तरकाशी माहात्म्य लेखने व्यापृताः ।

नखलुमहात्म्य ज्ञानमन्तरा भवत्युपादाने प्रवृत्तिः कस्यापि वस्तुन स्तदत्र तीर्थराज विषयेऽपि सैवास्ति परिस्थितिः । त्रिभुवनपावन कारण भूताया भव्यभावोद् भाविन्या भगवत्या जगज्जन्या जान्हव्या उद्‌गमन लीलाक्षेत्रस्या भूताया उत्तरकाश्या माहात्म्यं पठितं लेखक महोदयस्य श्रमस्तुत्यः प्रति भाति भूत भावनं भगवन्त मभ्यर्थये यथास्य स्यात् महीयान् प्रचारः सनातन धर्मे चाधिकतमो विचारो जनतायाः ।

लीलाधर शास्त्री, प्रधान अध्यापक
ऋषिकुल हरिद्वार ।

वेदपाठी पंडा सुरतराम जोशी वैद्यभूषण ने उत्तरकाशी महात्म्य जिसका वर्णन स्कन्द पुराणान्तर्गत केदारखंड में है उधृत कर यात्रियों के हित के लिये प्रकाशित किया है । इसके साथ साथ गंगोत्री यमुनोत्री केदारनाथ बद्रीनाथ तथा मानसरोवर कैलास होते हुए बद्रीनाथ पथ प्रदर्शिका मार्ग वर्णन भी दिया गया है । पं० जी ने बड़े परिश्रम से इस पुस्तक को तयार किया भगवान विश्वनाथ जी की कृपा से पुस्तक पाठकों को यात्रा को सफलता होगी ।

राज गुरू हरिदत्त शास्त्री,
देहरा दून ।

* भूमिका *

जय स्युत्तर काशीति सौम्य काशीतिच श्रुतम्। क्षेत्रं गोत्र कुलोत्तंस हिम वन्मद्धच संस्थितम् ॥ पञ्च क्रोश विशङ्कटं वरुणया चास्याचसं वेष्टितं भूभृद् भूषण वारणावत नितं बालं वियद् भ्राजते। गङ्गा यत्रच गायतीव मधुरं सामोर्मितुङ्ग स्वनै स्तप्यन्तेच तपो वितृष्ण मतयो यत्रोत्ववणं सा धवः ॥ तत्रास्ते विश्वनाथः श्री सत्तयादि सहितः प्रभुः। यत्र श्री विमले श्वरोद्रि शिखरे सिद्धि प्रदो योगिनां। कालिन्दी मणिकर्णि केश्वर युता गङ्गापिरा राजते ॥ ढुंढी शोत्थ गजान नाद्रि तनया युक्तो महेशः स्वराट्। शक्ति र्धातुमयो हियस्य पुरत श्चापास का भीष्टदा ॥ दुर्गाऽन्न पूर्णात्मुनि जामदग्न्यः श्री भैरवश्चाप्य वधूत दतः ॥ गोपेश्वरः साधु निषे वितश्च कोटेश्वरोनेक विभूति युक्तः ॥ केदारेशो ब्रह्मलिंगं सिद्धोयो भरतो जडः। रुद्रे श्वरश्च शमे शो ज्ञान वापी श्वरस्तथा ॥ पूर्वे लक्षेश्वरोदेवो याम्ये कालेश्वरः शिवः पश्चिमे वरुणे शश्च सौम्ये च सिखरे श्वरः एतेषां दर्शनं पुण्यं सौम्य काश्यां हि सर्वदा ॥

भारतवर्ष के तीर्थ स्थानों में उत्तरकाशी एक प्रधान तीर्थ स्थान है। यह स्थान पतित पावनी श्री गङ्गा भागीरथी जी के परम पुनीत तट पर वारुणावत् पर्वत की गोद, गङ्गा यमुना के मध्यवर्ती हिमालय में विद्यमान है। प्राचीन ग्रन्थों में सौम्य वाराणसी नाम से इस स्थान का विस्तृत वर्णन और महात्म्य पाया जाता है।

एक समय देवर्षि नारद जी ने अनेक ऋषि महात्माओं की प्रेरणा से कलु-कलुषित जीवों के उद्धार के निमित्त श्री स्कन्द

जी से प्रार्थना की, प्रभो ! कलियुग में कलु के प्रभाव से पतित जीवों के उद्धार का सब से सरल और सुगम उपाय क्या है ? नारद जी की प्रार्थना पर महर्षि स्कन्द जी ने इस मार्मिक प्रश्न का उत्तर देते हुए पाप ग्रसित प्राणियों के निस्तार का उपाय बतलाया। जिसका विस्तृत वर्णन स्कन्द पुराणान्तर्गत केदार खंड अध्याय ९३।९४।९५ में है उसी माहत्म्य को श्रीमान रायबहादुर कुलानन्द जी बड़थ्वाल वर्तमान स्वामी रघुकुलाश्रम का प्रोत्साहन पाकर सर्व साधारण की जानकारी के लिये सरल भाषा में उधृत कर प्रकाशित करता हूँ।

ऐतिहासिक दृष्टिकोण से भी यह स्थान विशेष महत्व का है। इस अनन्य त्रिशूलक क्षेत्र में आदि शंकराचार्य जी ने मोक्ष सिद्धि प्राप्त की। जड़ भरत जी ने यहीं पर समाधि ली। श्री स्वामी रामतीर्थ जी आदि को यहीं पर ही ब्रह्म साक्षात्कार हुआ।

ग्रन्थ का विषय तथा लक्षित तीर्थ इतना उपयोगी है कि संक्षेप में मुक्ति-स्थान प्रदीपिका कहा जाय तो अत्युक्ति न होगी। पाठक ग्रन्थ का आद्योपान्त अवलोकन कर मुक्त कंठ से प्रशंसा किये बिना न रहेंगे कि जिन्होंने कलु-कलुषित हीन प्राणियों के मंगलार्थ ऐसे पुण्य तीर्थ का परिचय दिया है। इस पुस्तक में उत्तरा खंड मार्ग प्रदीपिका भी यात्रियों के सुभीते के लिये सम्मिलित की गई।

विनीत—

पंडा काशीरामात्मज सूरतराम जोशी

वैद्य भूषण उत्तरकाशी टिहरी गढ़वाल राज्य।

* श्रीगणेशायानमः *

॥ अथ उत्तरकाशी महात्म्य प्रारम्भ ॥

ॐ नमःपरमात्मने ।

ऋषयऊचुः ।

सूत सर्व पुराणानाँ वक्ता त्वं हि मोहाशयः ।
शप्तान् श्रुत्वातुनिर्मुक्तान् कोटिशोब्रह्मराक्षसान् ।१।
गंगोत्पंत्तिंविशेषेण तथा राज्ञाँ महान्वयम् ॥
तीर्थानाँ चैव माहात्म्यं किमपृच्छत्पुनर्मुनि ॥२॥

॥ सूत उवाच ॥

श्रुत्वाकैलासमाहात्म्यं संक्षेपेण पुनर्द्विजाः ।
विशेषतः प्रष्टुकामःस्कंन्दं प्रोवाचनारदः ॥३॥

॥ नारद उवाच ॥

कृष्णावर्त्मज देवेश जगज्जनक सेवक ॥
निर्गलत्वन्मुखांभोजात्पिवतो वचनामृतम् ॥४॥

तृप्तिर्न जायते स्वामिन् पिपासावर्द्धतेऽधुना ।
क्षेत्राणाँसुबहूनां च वैभवः कथितः श्रुतः ॥५॥
अधुनाश्रोतुमिच्छामि सुसारं हिमवद्गिरौ ।
तथा कथित क्षेत्रेभ्योधिकं क्षेत्रं वदस्व मे ॥६॥

अथ श्री स्कन्द पुराणान्तर्गत केदारखण्डे पवित्रतमोत्तरकाशी पुण्यक्षेत्र महात्म्य भाषा टीका प्रारम्भते ।

उत्तरकाशी के महात्म्य को सुनने की इच्छा से नैमिषारण्य क्षेत्र में शौनकादि ऋषि सूत जी से बोले हे उदार बुद्धि वाले सूत जी ! आप सब पुराणों के वक्ता हो इस लिये यह बतलाइये कि करोड़ों ब्रह्मराक्षस जिनको अत्युग्र कर्म के कारण शाप हुवा था उनको शाप से मुक्त हुये सुन कर ॥ १ ॥ और गंगा जी की उत्पत्ति तथा राजाओं के वंश के चरित्र को और तीर्थों के महात्म्य को सुन करके नारद मुनि ने स्कंद जी से फिर क्या पूछा ॥२॥ सूत जी बोले हे ऋषियो ! कैलास के महात्म्य को संक्षेप से सुन कर पुनः विशेष से पूछने की इच्छा करके नारद जी स्कंद जी से कहने लगे ॥३॥ नारद जी बोले हे अग्नि के पुत्र संसार के उत्पन्न करने वाले शिव जी के सेवक स्कंद जी ! आपके मुखकमल से निकलते हुये वचन रूप अमृत को पान करते हुये भी ॥४॥ हे स्वामिन् ! तृप्ति नहीं होती किन्तु प्यास बढ़ती जाती है बहुत से क्षेत्रों का माहात्म्य जो आपने कहा वह हमने सब सुना ॥५॥ अब मैं हिमालय में सारभूत

जो क्षेत्र हैं वह सुनना चाहता हूँ पहिले कहे हुये तीर्थों में जो अधिक फल देने वाला हो वह तीर्थ आप हमको कहो ॥६॥

यत्र कस्मै चिदाख्यातं कलौ मुक्ति प्रदायकं ।
न यज्ञैर्नतपोभिश्च नैव पोषणाकव्रतैः ॥७॥
महादानैर्नचायासैः पुण्यं यद् भवति प्रभो ।
स्वल्पायासेन मुक्तिश्च सर्वैश्वर्यं भवेत्पुनः ॥८॥
रहस्याति रहस्यं च तत्क्षेत्रं वक्तुमर्हसि ।

॥ स्कंद उवाच ॥

अस्ति गुह्य तमं क्षेत्रं सारात्सार तरं परम् ॥९॥
परं गोप्यं परं तत्वं तुषार वच्छिलोच्चये ।
सर्व तीर्थ मयं सर्व देव जुष्टं सुपुण्यदम् ॥१०॥
यत्र भागीरथी पुण्या गंगा चोत्तर वाहिनी ॥
शौम्यकाशीति विख्याता गिरौवैवारणावते ॥११॥
असीच बरुणाचैव द्वे नद्यौ पुण्यगोचरे ॥
यत्र ब्रह्मा च विष्णुश्च महेशश्चेति ते त्रयः ॥१२॥
नित्यं सन्निहिता यत्र मुक्तिक्षेत्रे तथोत्तरे ॥
यत्रर्षीणांचस्थानानि आश्रमाश्च तथा शुभाः ॥१३॥

यत्रमारकर्तोभासं विभ्रत्येव सदा शिवः ॥
निक्षिप्ता यत्र पूर्वं हि संगरे देवतासुरे ॥१४॥

जो क्षेत्र आपने अब तक किसी से न कहा हो और कलियुग में मुक्ति का देने वाला हो, जो पुण्य न यज्ञों से न तपस्याओं से और न उपवासादि व्रतों से ॥७॥ तथा बड़े बड़े दानों से और अनेक उद्योगों से नहीं होता वह पुण्य जिस क्षेत्र में बिना परिश्रम से मिल जाय हे प्रभो! जहां सब प्रकार का ऐश्वर्य और मुक्ति भी प्राप्त हो जाय ॥८॥ ऐसे गुप्त से भी गुप्त क्षेत्र को आप हमारे प्रति कहने के योग्य हो। स्कन्द जी बोले हे नारद! एक अत्यंत गुह्य और सार से भी सार अद्भुत क्षेत्र है ॥९॥ जोकि परम गोपनीय एवं परम तत्व हिमालय प्रदेश में सम्पूर्ण तीर्थों से व्याप्त और अनेक देवताओं से सेवित ऐसा अत्यन्त पुण्य दायक क्षेत्र है ॥१०॥ जहां पवित्र गंगा भागीरथी उत्तर की तरफ बहती है वह सौम्यवाराणसी अर्थात् उत्तरकाशी नामक पुण्यक्षेत्र वारणावत पर्वत के समीप प्रसिद्ध है ॥११॥ जिस उत्तरकाशी में असी और वरुणा यह दो पवित्र नदियां बहती हैं. जहां ब्रह्मा विष्णु महेश यह तीनों देवता ॥१२॥ नित्य ही विराजमान रहते हैं और उस मुक्ति क्षेत्र के उत्तर भाग में महर्षियों के स्थान और पवित्र आश्रम हैं ॥१३॥ जहां सदाशिव सदा मरकतमणि की कांति को धारण करते हैं और पूर्वकाल में देवासुर संग्राम में फेंकी हुई ॥१४॥

अद्यापिदृश्यते तत्र शक्तिर्धातुमयी शुभा ॥
जमदग्निसुतो यत्र तपस्तेपेसुदुष्करम् ॥१५॥

तस्यक्षेत्रस्य माहात्म्यं सावधानोवधारय ॥
यत्र पुण्यानि तीर्थानि सर्वकाम प्रदानि हि ॥१६॥
येषां संदर्शनादेव न च भूयोभिजायते ॥
इयमुत्तरकाशी ति प्राणिनां मुक्तिदायिनी ॥१७॥
धन्या लोके महाभाग कलौ येषामिहस्थितिः ॥
यत्र सर्वांश भावेन वसन्ते सर्वदेवताः ॥१८॥

॥ नारद उवाच ॥

अति पुण्य तमं स्थानं पापिनापिमुक्तिदम् ॥
हिमालय तटे पुण्ये प्रोक्तं यद्धै त्वयोऽनघ ॥१९॥
तस्य क्षेत्रस्य माहात्म्यं देव विस्तरतोवद ॥
कथं काशीति संजाता पुरी देव पुरोगमा ॥२०॥
केन केन तपस्तप्तं के के पुण्यतमाश्रमाः ॥
कथं परशुरामेण तपस्तप्तं हिमाचले ॥२१॥
महाकाल्या कथंदेव पतिता शक्ति रुत्तमा ।
कुत्र मारकतंलिंगं श्रीशिवस्य परात्मनः ॥२२॥

सात धातुओं की बनी हुई शक्ति आज भी उस काशी क्षेत्र में दिखाई पड़ती है जहां कि परशुराम जी ने बड़ा उग्र तप किया था ॥१५॥ उस क्षेत्र का माहात्म्य सावधान हो कर

श्रवण करो, जिसमें अनेक प्रकार के तीर्थ सब कामनाओं के देने वाले हैं ॥१६॥ जिन क्षेत्रों के दर्शन मात्र से ही पुनर्जन्म नहीं होता है यह उत्तरकाशी क्षेत्र प्राणियों को मुक्ति देने वाला है ॥१७॥ वह मनुष्य संसार में धन्य हैं जिनका कि बड़ा भाग्य है जिनकी कलिकाल में इस क्षेत्र में स्थिति है, जिस काशी क्षेत्र में संपूर्ण देवता अपनी सब कामनाओं से निवास करते हैं ॥१८॥ नारद जी बोले हे निष्पाप स्कंद जी ! जो आपने पवित्र हिमालय के तट पर पापियों को भी मुक्ति देने वाला अत्यन्त पुन्य स्थान बतलाया है ॥१९॥ हे देव ! उस क्षेत्र के माहात्म्य को आप विस्तार पूर्वक कहो, इन्द्र की पुरी के तुल्य यह काशी किस तरह हुई ॥२०॥ किस किस ने यहां तप किया है और कौन कौन से पवित्र आश्रम यहां पर हैं परशुराम जी ने किस प्रकार उस हिमालय में तप किया ॥२१॥ महाकाली की वह उत्तम शक्ति कैसे स्वर्ग से गिरी और उस परमेश्वर श्री शंकर का मरकत मणि के समान प्रकाशमान स्वयं उत्पन्न हुवा लिंग भी कहां पर है ॥२२॥

एतत्सर्वं विस्तरेणपुण्यान्यायतनानिच ।
ब्रूहिस्कन्द ! विशेषेण माहात्म्यं वारणावते ॥२३॥
कुत्र पुण्यो महादेवः कुत्र वै वारणावतः ।
धन्योस्मि नाथ भगवन्यच्छृणोमिमुखाच्युतम्॥२४॥
वाक्पीयूष मिदं पुण्यं तृप्तिर्मे नहि जायते ।
त्वत्तःश्रुत्वा परमंज्ञानं सिद्धा मुक्तिं समाययुः॥२५॥

॥ स्कन्द उवाच ॥

श्रृणु नारद वृतान्तं पापघ्नं सर्व कामदम् ।
यथोत्तरस्थिता काशी जातेयंमुक्तिदा नृणाम् ॥२६॥
वक्ष्ये तद्विस्तरेणाहं यद्गत्वा मृतप्रश्नुते ।
शप्तां श्रुत्वा पुराकाशी सर्वेदेवाः सवासवाः ॥२७॥
कलावंतर्हिता काशी भविष्यति इति स्फुटम् ।
मुनयश्च महाभागाः संत्रस्ताः मुक्तिलालसाः॥२८॥
उमेशं शरणं जग्मुर्हिमवंतं नगेश्वरम् ।
शतयोजन विस्तीर्णा सभा यत्र विराजिता ॥२६॥
प्रमथैः सेव्यमाना च नंद्यादिभिरनुष्टिता ।
सर्व काम फलो पेता देवकिन्नर सेविता ॥३०॥

हे स्कंद ! वारणाव्रत पर्वत में जो पुण्य स्थान हैं उनका माहात्म्य और यह वृतान्त विस्तार पूर्वक वर्णन करिये ॥२३॥ वह पवित्र शिवलिंग और वारणावत पर्वत कहां हैं। हे भगवन् मैं धन्य हूँ जो कि आपके मुख से निकलते हुये ॥२४॥ वचनामृत को श्रवण करता हूँ परन्तु उस पुण्य वचनामृत को श्रवण करते हुए मुझे तृप्ति नहीं होती है। सनकादि सिद्ध ऋषि आप से शुद्ध ज्ञान को श्रवण कर मुक्ति को प्राप्त हो गये थे ॥२५॥ स्कन्द जी बोले हे नारद ! सब कामनाओं के देने वाले पापनाशक इस वृतान्त को श्रवण करो जिस प्रकार कि

मुक्ति की देने वाली उत्तरकाशी उत्पन्न हुई है ॥२६॥ वह सब मैं विस्तार पूर्वक कहता हूं जिसको जानकर मनुष्य मोक्ष प्राप्त करता है। पूर्व काल में इन्द्रादि सब देवताओंने काशी को शापयुक्त सुन कर ॥२७॥ कलियुग में काशी अवश्य अन्तर्हित हो जावेगी यह विचार कर मुक्ति की इच्छा वाले मुनिजन भय भीत हुये ॥२८॥ और पर्वतराज हिमालय में महादेव की शरण में गये जहां कि सौ योजन तक विस्तीर्ण देवताओं की सभा विराजमान थी ॥२९॥ जो कि बहुत से शिवगण गंगादि नदियों से तथा देवता किन्नरों से सुशोभित और सब कामनाओं से परिपूर्ण था ॥३०॥

अप्सरोभिर्गीय मान पुण्य कृद्धिः सुगोचरा।
यत्रास्ते भगवान् शंभुः पार्वत्या सहितः प्रभुः॥ ३१ ॥
यत्र सर्वे महा नागा वासु क्याद्याः प्रतिष्ठिताः।
चरणौ सेवितुं शंभोर्भूषणा त्व मुपा गताः॥ ३२॥
जटा जूट तटाद्यत्र जाह्नवी निर्गता शुभा।
भागीरथ नृपाराधा तच्चक्र परिगोचरा॥ ३३॥
तत्र न त्वा महेशानं दृष्ट्वा देव मुमापतिम्।
तुष्टुवु वार्गिभर्भव्याभिः सर्व भूत विमुक्तये॥ ३४॥

॥ ऋषयऊचुः ॥

शंभवे विभवे तुभ्यं व्यापकाय परात्मने।
भवस्ते भव्य रूपाय निरूपाय परात्मने॥ ३५॥

निरंजनाय शुद्धाय ज्ञानरत्न प्रदायिने ।
नमो देवाधि देवाय देवसेव्यायते नमः ॥३६॥
नमस्त्रैलोक्य नाथाय नमस्त्रैलोक्य रूपिणे ।
सर्व शक्ति स्वरूपाय निखिलेशा यते नमः ॥३७॥
पार्वतीपतये तुभ्यं निराभासाय ते नमः ।
निराध्या सत्य सूक्ष्माय सूक्ष्मात्सूक्ष्मतरायते ॥३८॥

जिस सभा में पुण्य करने वाली अप्सरायें गायन कर रही हैं जिसको सुकृत कर्म करने वाले मनुष्य सरलता से देख सकते हैं जहां भगवान् शंकर पारवती के सहित निवास करते हैं ॥३१॥ जिस सभा में बड़े वासुकि आदि नाग शिवजी के चरण की सेवा करने के लिये भूषण बने हुये हैं ॥३२॥ राजा भगीरथ की आराधना से उसके रथ के चक्र द्वारा बहने वाली जाह्नवी शिव जी के जटा जूट से जहां निकली है ॥३३॥ उस कैलास पर्वत में जाकर पारवती पति शंकर भगवान् को देख कर सम्पूर्ण प्राणियों की मुक्ति के लिये इन्द्रादि देवता अपनी पवित्र वाणी से स्तुति करने लगे ॥३४॥ ऋषि बोले सर्वशक्तिमान सर्वत्र व्यापक परमात्मा मंगलमय रूप वाले तथा रूप से रहित और निराकार शंकर के लिये नमस्कार है ॥३५॥ जो कि शुद्ध निरंजन ज्ञान रूप रत्न को देने वाले देवों के देव देवताओं से सेवा करने योग्य उस शिव को नमस्कार है ॥३६॥ तीनों लोकों के स्वामी त्रैलोक्यरूपी सर्व शक्तिस्वरूप सबके ईश्वर आप को नमस्कार है ॥३७॥ पारवती

के पति आभा से रहित तथा अभ्यास से भी रहित सूक्ष्म से भी सूक्ष्म शिव को नमस्कार है ॥३८॥

स्थूलात्स्थूलतरायेश नमस्ते जगती पते ।
जगन्नाथाय जगताँ सँहार परिकारिणे ॥३९॥
विकारिणे निरीशाय निरीहाय नमोस्तु ते ।
भस्मभूषित देहाय हिमाद्रीपतयेनमः ॥४०॥
नमः काशी निवासाय निराधाराय ते नमः ।
विरुद्ध धर्म हीनाय नीलकंठाय वेधसे ॥४१॥
सृजते पालयित्रे च सर्व सत्व स्वरूपिणे ।
योगिने योगरूढ़ाय योगिनां पतये नमः ॥४२॥

॥ स्कंद उवाच ॥

इति तेषां स्तुतिं श्रुत्वा दिव्याँ वै वेद संमिताम् ।
प्रोवाच सन्तुष्टमनाः सर्वानृषि गणाञ्छिव ॥४३॥

ईश्वर ऊवाच ।

भो तापसा किं युष्माक मभीष्टं वदतदुत्तमम् ।
किमर्थ मागता ह्यत्र मांस्तोतुं भक्तितत्पराः ॥४४॥

युष्माकमीप्सितं सर्वं पूरयिष्याम्यसंशयम् ।
सत्यं मे वदत क्षिप्रं यद्वो मनसि संस्थितम् ॥४५॥

॥ ऋषयऊचुः ॥

भगवन् सर्व भूतेश कृतार्थाःस्मोवयं किल ।
यै भगवन्-दृष्टिमार्गं हि प्रापितो भक्तवत्सलः॥४६॥
कलावंतर्हिता काशी इति शप्ता किलाऽधुना ।
तत्खेद श्रवणात्प्राप्त पीड़ा यत्र समागताः ॥४७॥
कलौपाप समाविष्टे सर्व धर्म विवर्जिते ।
कथं काशीं विना देव गतिर्नृणाँ भविष्यतिं ॥४८॥

जो स्थूल से भी स्थूल है ऐसे समस्त संसार के स्वामी संसार की रचना पालत संहार करने वाले हे ईश ! आपको नमस्कार है ॥३९॥ विकार वाले और प्रपंच विकार से रहित निष्काम तथा भस्म से शोभित शरीर धारी हिमालय के स्वामी शंकर का नमस्कार है ॥४०॥ काशी में निवास करने वाले आधार और विरुद्ध धर्म से रहित नीलकंठ ब्रह्म स्वरूप शिवको नमस्कार है ॥४१॥ संसार के उत्पन्न और पालन करने वाले सर्व प्राणी स्वरूप तथा योग में तत्पर योगियों के पति योगी शिव का नमस्कार है ॥४२॥ स्कन्द जी बोले—देवताओं की वेदार्थ युक्त दिव्य स्तुति का सुनकर प्रसन्न चित्त हुये शिव जी सब ऋषियों का कहने लगे ॥४३॥ शिवजी बोले हे तपस्वी

ऋषियों ! आप लोगों का मनोरथ क्या है शीघ्र कहो आप लोग यहां क्यों आये हो जो भक्ति पूर्वक मेरी स्तुति कर रहे हे ॥४४॥ आपके मनोरथ को मैं पूण कर दूंगा इस में संशय नहीं इस लिये जो आप के मन में है शीघ्र ही हम से कहो ॥४५॥ ऋषि कहने लगे हे भगवन्! सब प्राणियां के ईश्वर शिव जी! हम इस समय कृतार्थ हो गये हैं जो आप भक्तवत्सल हमारे दृष्टिगोचर हुये ॥४६॥ हे देव! कलिमुग में काशी अन्तर्हित होवेगी यह काशी को शाप हुवा है। इस आश्चर्य को सुन कर हम दुःखी होकर यहां आये हैं ॥४७॥ पाप से भरे हुये सब धर्म कर्मों से रहित कलियुग में काशी के बिना हे देव! मनुष्यों की गति किस प्रकार होवेगी ॥४८॥

कथं संसार पाशस्य समुच्छेदो भविष्यति ।
कलौ येषां गतिर्नास्ति तेसां वाराणासी गतिः॥४६॥
तस्यामन्तर्हितायान्तु कुत्रस्थानं तव प्रभो ।
एतन्नः संशयं छिंधियतस्त्वं करुणानिधि ॥५०॥

॥ ईश्वर ऊवाच ॥

यदा पापस्य वाहुल्यं यवनाक्रांत भूतलम् ।
भविष्याति तदा विप्रा निवासं हिमवद्गिरौ ॥५१॥
काश्या सह करिष्यामि सर्व तीर्थैः समन्वितः ।
अनादिसिद्धं मत्स्थानं वर्त्तते सर्व दैवहि ॥५२॥

यत्र भागीरथी गंगा उत्तराश्रित वाहिनी ।
असी च वरणा तत्र सन्निधाने सदैवहि ॥५३॥
काश्यां हि यानि तीर्थानि तानि सर्वाणि तत्रहि ।
वर्तते सर्वदा नूनं भुक्ति मुक्ति कराणि च ॥५४॥
अन्येषु तीर्थराजेषु काश्यामपि द्विजोत्तमाः ।
अशांश भावतोविप्रा निवसामि सदा नघाः ॥५५॥
केदार मंडलेह्यत्र साकल्पेन स्थिति र्मम ।
अस्यास्तु दर्शनादेव मुक्तो भवति मानुषः ॥५६॥
यदिस्यात्पुराय वशातो मृतिरत्रतु कस्यचित् ॥
कृमि कीट पतंगाद्यैः सोपि मुक्तो न संशयः ॥५७॥

और संसार वंधन का छेदन कैसे होगा क्योंकि कलियुग में जिनको कहीं भी गति नहीं है उनकी गति काशी में होती है ॥४९॥ उस काशी के अन्तर्धान हो जाने पर आपका स्थान कौनसा होगा हे प्रभो ! हमारे इस संशय को दूर कर दीजिये क्योंकि आप दयालु हो ॥५०॥ शिवजी बोले हे ब्राह्मणों ! जब पृथ्वीतल यवनों से भर जायगा और पापकी अधिकता होवेगी उस समय हिमालय में मेरा निवास होवेगा ॥५१॥ उस हिमालय में काशीक्षेत्र के अन्तर्गत सब तीर्थों के साथ में निवास करूंगा वह मेरा स्थान अनादिकाल से सिद्ध है ॥५२॥ जहां उत्तर की ओर बहने वाली गंगा भागीरथी और असी वरुणा दो नदियां हमेशा निकट में रहती हैं ॥५३॥ जितने

तीर्थ पूर्वकाशी में हैं उतने ही सब तीर्थ भोग मोक्ष को देने वाले उत्तरकाशी में भी हैं ॥५४॥ हे निष्पाप ब्राह्मणो ! और भी श्रेष्ठ तीर्थों में तथा पूर्वकाशी में भी अपने अंशरूप से निवास करता हूँ ॥५५॥ परन्तु केदार मंडल में मेरी सर्वभाव से स्थिति है इस उत्तरकाशी क्षेत्र के दर्शन से ही मनुष्य बंधनों से छूट जाता है ॥५६॥ यदि किसी पुण्य योग से कृमि कीट पतंगादि किसी जीव की मृत्यु इस काशी क्षेत्र में हो जाय तो वह भी मुक्त होता है इसमे संशय नहीं ॥५७॥

यथा काशी तथाह्येषा मत्पुरी भेद वर्जिता ।
यः कश्चिद्भेदकृल्लोके सयाति नरके ध्रुवम् ॥५८॥
अत्रस्नानं तु यो मर्त्यः करोति भाग्य योगतः ।
अयुतार्का भयानेन स गच्छेन्न पदं ध्रुवम् ॥५९॥
अस्मिन् क्षेत्रे विलीयंते पापान्य न्यत्र मानुषैः ।
कृतानि स्पर्श मात्रेण महात्यपि च सुव्रताः ॥६०॥
अस्मिन् क्षेत्रे च यत् पापं करोति मनुजाधमः ।
अमर्न्पिशाचैः सार्द्धं तु न भूयः पुरुषो भवेत् ॥६१॥
अत्र स्वल्पं च य पापं करोति मनुज क्वचित् ॥
तद्वर्द्धते प्रतिपलं कोटि कोटि गुणं तथा ॥६२॥
तस्मात्सर्व प्रयत्नेन नास्मिन्पापं समाचरेत् ।

अत्रयो मासमेकं तु ह्यविच्छेदं दृढव्रतः ॥६३॥॥
गंगायां स्नाति यत्पुण्यं वदामि श्रृणुत द्विजा ।
इह लोके चिरंस्थित्वा भुक्त्वा भोगान शेषतः॥६४॥

जैसी पूर्व काशी है ऐसी यह उत्तरकाशी पुरी भी है इन में कुछ भी भेद नहीं है, संसार में जो मनुष्य भेद समझता है वह अवश्य नरक में जाता है ॥५८॥ इस उत्तरकाशी क्षेत्र में जो मनुष्य दैवयोग से स्नान करता है वह देह त्यागने पर दस हजार सूर्यों के समान कांति वाले विमान से मेरे अविनाशी पद शिवलोक को जाता है ॥५९॥ अन्य स्थानों में किये हुये मनुष्यों के पाप इस क्षेत्र में आकर नष्ट हो जाते हैं। हे अच्छे व्रत करने वाले ऋषियो ! इस काशी क्षेत्र में बड़े बड़े पाप तीर्थ के स्पर्शमात्र से दूर होते हैं ॥६०॥ इस पुण्य क्षेत्र में आकर जो अधम मनुष्य पाप करता है वह पिशाचों के साथ घूमता हुवा फिर कभी पुरुष नहीं होता है अर्थात् नीच योनि में जाता है ॥६१॥ इस तीर्थ में कोई मनुष्य यदि थोड़ा भी पाप करे तो वह प्रत्येक क्षण में बढ़ता हुवा करोड़ गुणा हो जाता है ॥६२॥ इस लिये सब प्रकार से यहां कदाचित भी पाप नहीं करना चाहिये। जो मनुष्य यहां प्रति दिन दृढ़ संकल्प से नियम पूर्वक एक मास पर्यन्त ॥६३॥ गंगा स्नान करता है हे ब्राह्मणो ! उसका पुण्य मैं आपको कहता हूँ वह इस लोक में बहुत काल निवास करके अनेक भोगों को भोग कर ॥६४॥

कल्पं मदीय लोकेतु स्थित्वा भूमौ भवेन्नृपः ॥
सर्व शास्त्रार्थ तत्वज्ञो धर्मज्ञो वहु दानदः ॥६५॥

पुत्र पौत्रैः परिवृतो धर्मतः सुख भुक् तथा ॥
अन्ते काश्यां समागत्य मय्येव परिलीयते ॥६६॥
त्रिरात्रमंत्रोषित्वा तु पूजयित्वापि मां द्विजाः।
यत्र कुत्रापि म्रियते स शैवं लोक माप्नुयात् ॥६७॥
अन्य जन्मनि सोप्यत्र प्राप्नोत्येव मृतिं शुभाम् ॥
तारकं ब्रह्म ह्यत्रैव उपदेक्ष्यामि मानुषे ॥६८॥
प्राणेषूत्क्रममाणेषु येन मुक्तो भवेन्नरः।
जीव मात्रोपि यः कश्चिदत्र प्राणान् विमुंचति ॥६९॥
स एव जायते लीनो मद्देहे सकलाश्रये ॥
विप्राःक्षेत्रं न मुक्तं वै अविमुक्तं ततःस्मृतम् ॥७०॥
जपं दत्तं हुतं तप्तम् विमुक्ते किलकाक्षयम्।
अश्मना चरणौ हत्वा वसेत्काशञ्चन त्यजेत् ॥७१॥

मेरे लोक में एक कल्प पर्यन्त निवास करके पुनः पृथ्वी में पुण्य के समाप्त हो जाने पर सब शास्त्रों के तत्त्व को जानने वाला धर्मात्मा दानी राजा होता है ॥६५॥ और वह पुत्र पौत्रादि युक्त होकर धर्मपूर्वक सुख भोग कर के अन्त में काशी में निवास करके मेरे में लीन हो जाता है ॥६६॥ हे ब्राह्मणो! जो मनुष्य तीन रात्रि तक उत्तरकाशी में शिव पूजन करता है और अन्त में वह जहां कहीं भी शरीर छोड़ता है अन्त में

शिव लोक को जाता है ॥६७॥ फिर अन्य जन्म में वह इसी क्षेत्र में शुभ मृत्यु पाता है वह मनुष्य मरण काल में मनुष्य देह में ही तारक मंत्र का उपदेश ग्रहण कर ॥६८॥ प्राणों के निकलते ही वह मनुष्य मुक्त हो जाता है जो कोई भी जीव मात्र इस तीर्थ में प्राण त्यागता है ॥६९॥ वह समस्त जगत के आधार मेरे देह में ही लीन होता है हे ब्राह्मणो इस उत्तरकाशी पुण्य क्षेत्र को मैंने कभी नहीं छोड़ा है इस लिये इसका नाम अविमुक्त क्षेत्र है ॥७०॥ अविमुक्त क्षेत्र में यज्ञ दान जप तप जो कुछ भी किया जाय अक्षय हो जाता है। पत्थर से पैरों को काट कर भी काशी में निवास करना चाहिये जिससे काशी नहीं छूटे ॥७१॥

गुह्यानाँ परमं गुह्य मेतत्क्षेत्रं परं मम ।
वरणा च नदी यासो तयोर्मध्ये वाराणसी ॥७२॥
अत्र स्नानं जपो होमो मरणं हर पूजनम् ।
श्राद्धं दानं निवासश्च यज्ञः स्याद्भुक्तिमुक्तिदः ७३
मणि कर्णिकायां स्नात्वा तु यः पितृंस्तर्पयेज्जलैः ।
पितरस्तस्यतृप्ताःस्युर्या वत्कल्प शतंशतम ॥७४॥
पिंडदानं च ये कुर्युं विधिवत् पितृतत्पराः ।
ऊध्दृताः पितरस्तैस्तु कुलमेकोतरं शतम् ॥७५॥
यः कश्चिद्दे तत्क्षेत्रं तु ह्यवज्ञाय कु बुद्धिमान् ।

अन्यतीर्थं ब्रजेत्सोपि रमते कोणपैः सह ॥७६॥
येनकेनाप्यु पायेन मृतिमिच्छेत तत्र वै ।
अमंगलं जीवितं तु मरणं यत्र मंगलम् ॥७७॥
इतः प्रभृति भो विप्रास्तत्रैव संवसाम्यहं ।
यावंति काश्यां तीर्थानि तानितत्रैव संति च ॥७८॥
बहूना किमि होक्तेन सामुक्तिः कारणं परं ।
तत्व ज्ञानं विनान्यत्र मुक्तिर्नैवास्ति दुर्लभा ॥७९॥

यह मेरा क्षेत्र गुप्त तीर्थों में भी गुप्त है वरुणा और असी इनके मध्यगत होने के कारण इसको वाराणसी भी कहा जाता है ॥७२॥ इस तीर्थ में स्नान, जप, तप, होम, मरण श्राद्ध, शिव पूजन, दान, यज्ञ काशी निवासादि सत्कर्म भोग मोक्ष को देने वाले हैं ॥७३॥ जो मनुष्य मणि कर्णिका के तट पर स्नान करके उस जल से पितरों का तर्पण करे उसके पितृगण सैकड़ों कल्प तक तृप्त रहते हैं ॥७४॥ जो मनुष्य मणि कर्णिका में पितृपरायण हो कर विधि पूर्वक पिंडदान करते हैं उन्होंने अपने एक सौ एक कुल सहित पितरों का उद्धार कर लिया है ॥७४॥ जो दुर्बुद्धि वाला मनुष्य इस क्षेत्र की अवज्ञा करके दूसरे तीर्थ में जाता है वह राक्षसों के साथ विचरता रहता है ॥७६॥ मनुष्य को चाहिये कि उस क्षेत्र में जिस किस प्रकार से मृत्यु की इच्छा करे क्यों कि वहां जीवित रहना अमंगल है और मरण मंगल रूप है ॥७७॥ हे देवताओ ! इस समय से लेकर मैं उसी क्षेत्र में वास करूंगा जितने तीर्थ पूर्वकाशी में

उतने ही इस काशी क्षेत्र में भी हैं ॥७८॥ बहुत कहने से क्या है वह मुक्ति का परम कारण है। अन्य स्थानों में तत्त्वज्ञान के बिना दुर्लभ जो मुक्ति है वह नहीं प्राप्त हो सकती ॥७९॥

अत्र सा प्राप्यते देह त्यागेनैव महा ब्रताः ।
तस्मादस्मात्पुण्य तम मन्यन्नास्तीह भूतले॥८०॥
केदार मंडले सारात्सारमेषैवमत्पुरी ।
इयमेव कलौ म्लेच्छ जन संकुलके ध्रुवम् ॥८१॥
काशीति ख्यातिं यात्येव नान्यथा मम भाषितम् ।
कलावंतर्हिता काशी यवन प्रबलोद्भुता ॥८२॥
भविष्यति तदा ह्यस्यां कशी संज्ञा सुमुक्तिदा ।
इदं मत्परमं गोप्यं स्थानमस्ति सुनिर्मितम् ॥८३॥
पापिष्ठास्तन्नजानंति मम माया विमोहिताः ।
धर्मज्ञाश्च सदाचाराः सुशीलाः सत्यवादिनः॥८४॥
तेषामेव भवेदेषा नयनांतर गोचरा ।
जन्मांतर सहस्रेषु यदि तप्तं महत्तपः ॥८५॥
तदैव प्राप्यते नूनं मत्पुरी नान्यथा द्विजाः ।
पञ्चक्रोशात्मकं क्षेत्रं पूर्वं पश्चिमतस्तथा ॥८६॥
दक्षिणोत्तर तश्चैव मृतो मुक्ति मवाप्नुयात ।

तत्रैव वर्तते लिंगं मदीयं मारकत प्रभम् ॥८७॥
विश्वेश्वर इति ख्यातं भुक्ति मुक्ति प्रदायकम् ।
त एव धन्या लोकेषु तैरेव सुकृतं कृतम् ॥८८॥

हे महान् व्रत वाले ऋषियो ! इस क्षेत्र में वह दुर्लभ मुक्ति शरीर के त्यागने से ही प्राप्त होती है इस लिये इससे अधिक पवित्र तीर्थ दूसरा पृथ्वी में कहीं नहीं है ॥८०॥ केदार मंडल में सारभूत तीर्थों में यही मेरी पुरी सार है यही काशी कलियुग में जब म्लेच्छ जन बहुत हो जावेंगे ॥८१॥ तब यह क्षेत्र काशी नाम से प्रसिद्ध होगा यह मेरा कहना अन्यथा नहीं है कलियुग में यवनों से नष्ट की हुई काशी अन्तर्धान हो जावेगी ॥८२॥ तब इस काशी क्षेत्र में ही मुक्तिदायक तीर्थ काशी नाम करके होगा यह मेरा परम गुप्त मनोहर बना हुआ स्थान है ॥८३॥ पापी पुरुष मेरी माया से मोहित होकर उस क्षेत्र का नहीं जानते हैं जो धर्म के जानने वाले सदाचारी सुशील सत्यवादी हैं ॥८४॥ उन्हीं का यह काशी पुरी दृष्टिगोचर होती है जिन्होंने हजारों जन्मों से तप किया हो ॥८५॥ हे ब्राह्मणों ! यह मेरी पुरी तब ही प्राप्त होती है यह निश्चित है यह क्षेत्र पूर्व से पश्चिम तक पांच कोश तक विस्तृत है ॥८६॥ इसी प्रकार दक्षिण से उत्तर तक भी पांच कोश है जिसक यहां मृत्यु होती है वह मुक्ति प्राप्त करता है उसी क्षेत्र में ही मरकतमणि की काँति के सदृश मेरा लिंग है ॥८७॥ जो कि भाेग मोक्ष का देने वाला विश्वेश्वर नाम से ख्यात है संसार में वही मनुष्य धन्य हैं उन्होंने ही पुण्य कर्म किया है ॥८८॥

तैरेव सुतपस्तप्तं यैर्दृष्टं लिंगमुत्तमम् ।
यत्तत्र क्रियते कर्म तदक्षयाय कल्पते ॥८६॥
महारुद्र विधानेन अभिषेकं करोति यः ॥
ममानुचरतां प्राप्य मयैव सह मोदते ॥६०॥
यं यं प्रार्थयते कामं तं तं प्राप्नोति मानवः ॥
येन नालोकितं लिंगं स शोच्यो नात्र संशयः॥६१॥
पुत्रार्थी पुत्र प्राप्नोति धनार्थी लभते धनम् ॥

॥ स्कंद उवाच ॥

इत्युक्त्वा विससर्जाथ सर्वानृषि गणान्मुदा ॥६२॥
समाययौ स्वभवने वारणाव्रत संज्ञके ।
ततः प्रभृति देवोसौ तत्रैव वसते ध्रुवम् ॥६३॥
अथान्यच्च प्रवक्षामि यथा तप्तं पुरातपः ।
जामदग्न्येन रामेण सावधानोऽवधारय ॥६४॥
पुरा परशुरामो वै वारणावत संज्ञके॥
क्षेत्रे मुनि गणैर्जुष्टे गंगोर्मिभिर्विराजते ॥६५॥

और तप भी उन्होंने किया है जिन्होंने यह उत्तम शिवलिंग देखा है जो कुछ यहां सत्कर्म किया जाता है वह अनन्त हो

जाता है ॥८९॥ जो मनुष्य महारुद्र के विधान से विश्वेश्वरलिंग का अभिषेक करता है वह मेरा अनुचर होकर मेरे साथ ही विचरता है ॥९०॥ मनुष्य जिस जिस पदार्थ की कामना करता है उसको वह प्राप्त कर लेता है जिसने वह शिव लिंग नहीं देखा वह शोचनीय है इस में संशय नहीं ॥९१॥ पुत्र की इच्छा वाला पुत्र प्राप्त करता है धन चाहने वाला धन प्राप्त करता है स्कन्द जी बोले हे नारद! शिव जी ने इस प्रकार सब ऋषियों को कह कर उन्हें विसर्जन किया ॥९२॥ और अपने निवास स्थान वारणावत पर्वत में चले आये उस समय से शंकर भगवान उसी क्षेत्र में निवास करते हैं ॥९३॥ इसके अनन्तर और भी आपको कहता हूँ जिस प्रकार कि जमदग्नि पुत्र परशुराम जी ने वहां तप किया था हे नारद! तुम सावधान होकर समझ लो ॥९४॥ पूर्वकाल में परशुराम जी वारणावत नाम के काशी क्षेत्र में जोकि मुनियों के समूहों से सेवित और गंगा जी की लहरों से शोभायमान है ॥९५॥

नाना द्रुम लता कीर्णे नाना मुनि गणान्विते।
नाना रत्न मये दिव्ये नाना पक्षि गणावृते॥९६॥
गंगातटे महादेवं भूति भूषित मस्तकम्।
त्रिनेत्रं वृषभारूढं नंदि भृंग्यादिभिर्गणैः॥९७॥
सेवितं दंड हस्तेन द्वारपालेन शोभितम्।
सुरासुरगणाराध्यं व्याघ्र चर्मासनास्थितम्॥९८॥

द्वीपि कृत्ति वसानं च चंद्राद्धं शोभिभालकम् ।
ध्यायन् सदा शिवं देवं निश्चलो निर्ममो मुनिः॥९९॥
जितेंद्रियो जित क्रोधः स्थितः स्थाणु रिवापरः ।
एवं तपः कुर्वतश्च प्ररुरोहुर्लता द्रुमाः ॥१००॥
तस्यांगे धूमतः (?) श्चित्रं बभूव मुनिवंदित ।
एवं प्रतपतस्तस्य संतुष्टो भूत्सदाशिवः॥१०१॥
उवाच वचनं रम्यं मेघ गंभीरया गिरा ।

ईश्वर ऊवाच ।

वरं वरय भद्रं ते यत्ते मनसि वर्त्तते ॥१०२॥
तत्तुभ्यं सर्वदा दास्ये मा कुरुष्वात्र संशयम् ॥

॥ स्कन्द उवाच ॥

इत्युक्तस्तु शिवेनासौ ययाचे वर मुत्तमम् ॥१०३॥

जहां कि अनेक बृक्ष लतायें भरी हैं अनेक मुनिजनों से सेवित अनेक रत्नों से युक्त तथा विचित्र और नाना प्रकार के पक्षिगणों से युक्त काशी के गंगा तट में ॥९६॥ भस्म से भूषित मस्तक से शोभायमान तीन नेत्र वाले वृष के ऊपर आरूढ़ हुये नंदी भृंगी आदि गणों से युक्त शिव को ॥९७॥ हाथ में दंड लिये द्वारपाल से शोभित देव दानवों के आरधना के योग्य

व्याघ्र चर्म पर बैठे हुये ॥९८॥ और हाथी के चर्म को धारण किये अर्धचन्द्र से जिनका मस्तक शोभायमान है ऐसे भगवान् शंकर का ध्यान करते हुये मोह से रहित परशुराम मुनी जी ॥९९॥ क्रोध तथा इन्द्रियों को जीत कर इस तरह बैठ गये मानो दूसरे ही शंकर बैठे हुये हों इस प्रकार उनके तप करते करते उनके शरीर से वृक्ष लतायें उत्पन्न होने लगी ॥१००॥ हे मुनियों से वन्दित नारद जी! बुद्धिमान् परशुराम जी के शरीर से जब यह आश्चर्य उत्पन्न हुआ तब तपस्या करते हुये उनके ऊपर शिव जी प्रसन्न हुए ॥१०१॥ और मेघ के समान गम्भीर वाणी से मनोहर वचन बोले शिव जी कहने लगे हे मुने! तुम्हारा कल्याण हो! वर मांगो जो कुछ तुम्हारे मन में है ॥१०२॥ वह सब तुमको सदैव काल के लिये दे दूंगा इस में तुम संशय मत करो। स्कन्द जी बोले हे नारद! इस प्रकार जब शिव जी ने परशुराम जी को ऐसा कहा तब उन्होंने उत्तम वर मांगा ॥१०३॥

अजेयत्वं रणेऽरीणां तथा च चिर जीवनम्।

प्रसन्नेन शिवेनोक्तस्तत्तथैव भविष्यति ॥१०४॥

इत्युक्त्वा परशुं तस्मै दत्त्वा वाञ्छत्रुमाकरम्।

ततः परशुमादाय प्रणम्य च सदाशिवम् ॥१०५॥

सार्वभौम त्वयात्रैव वस्तव्यं सर्वदैव हि।

सकलांशेन देवेश सगणेनेह भक्ति द ॥१०६॥

इति देवं प्रार्थयित्वा रामस्तत्रैव संस्थितः।

चकार शिव भक्तिं च योगिनामप्पगोचराम्· १०७॥
ततः स एव संचक्रे क्षत्रियाणां हि संक्षयम्॥
त्रिः सप्तकृत्वो जगति परशोर्धारया मुनिः ॥१०८॥

कि युद्ध में शत्रुओं से कभो न जीता जाऊं और दीर्घायु रहे मुनि ने शिव जी को जब ऐसा कहा तब शिव जो ने कहा कि सब ऐसा ही होगा ॥१०४॥ यह कह करके शत्रुओं के संहार करने वाला कुहाड़ा उसको दिया परशुराम जी कुहाड़ा लेकर शंकर को प्रणाम करते हुये बोले ॥१०५॥ हे शर्व! हे भीम! हे भक्ति के देने वाले शंकर! आप अपने गणों के और देवताओं के सहित हमेशा यहीं निवास करें सम्पूर्ण अंश भाव से आपका इसी काशी क्षेत्र में निवास हो ॥१०६॥ परशुराम जी इस प्रकार शिवजी से प्रार्थना करके वहीं रहने लग गये और योगि जनों से भी दुर्लभ शिवभक्ति को करने लगे ॥१०७॥ फिर कुछ काल के अनंतर उन्हीं परशुराम जी ने अपनी परशुधारा से इक्कीस वार पृथ्वी में क्षत्रियों का नाश किया ॥१०८॥

इति श्री स्कन्दे महापुराणे केदारखण्डान्तर्गत सौम्य-
वाराणसी महात्म्ये प्रथमोऽध्याय ॥१॥

श्री स्कन्दे महापुराणे केदारखण्डार्गत सोम्यबाराणसी माहात्म्ये द्वितीयोध्याय प्रारम्भ्यते ।

॥ नारद उवाच ॥

कथं त्रिः सप्तकृत्वोहि चक्रे क्षत्रिय संक्षयम् ।
रामः परशुसंयुक्तस्तन्मे वद सुविस्तरम् ॥१॥

॥ स्कन्द उवाच ॥

एकदा कार्तवीर्यो वै गच्छन्केदारमंडलम् ।
ययौ तेन च मार्गेण यत्र रामाश्रमं शुभम् ॥२॥
जमदग्नेस्तत्र पत्नी जलानयन कारिणी ।
अपक्व मृण्मयैः कुंभै र्ददर्श भगिनी पतिम् ॥३॥
कार्तवीर्यं समस्तैश्च बलैश्च परिवारितम् ।
नाना पत्ति भिरश्वै श्व मत्त मातंग यूथकैः ॥४॥
महारथैः खड्गहस्तैः शोभमानं सुतेजसा ।
दृष्ट्वा तं रेणुका भूयं चिंतयामास मानसे ॥५॥
धन्यामद्भगिनी नूनं यस्याः एता दृशः पतिः ।
मत्पतेस्तु जलाहर्तुं पात्रं नैवास्ति किंचन ॥६॥
इतिवै चितयंत्याश्च कलशः सिरसोयतत् ।

भूमौ सचूर्णितश्चा सीन्नज्ज्ञात्वा जमदग्निकः ॥७॥
क्रोधादुवाच पुत्रांश्च प्रत्येकं पर्य पृच्छत ।
यः कश्चिदस्यारंडायाः शिरच्छेत्ता स मे सुतः ॥८॥

नारद जी बोले हे स्कन्द ! परशुराम जी ने इक्कीस वार क्षत्रियों का संहार कैसे किया था यह हमको विस्तार पूर्वक कहो ॥१॥ स्कन्द जी बोले एक समय कृतवीर्य का सहस्त्रार्जुन नाम का राजा केदार खण्ड की यात्रा करता हुआ उस रास्ते से जा निकला जहां परशुराम जी का आश्रम था ॥२॥ वहां जमदग्नि ऋषि की स्त्री रेणुका मिट्टी के कच्चे घड़ों में जल लाती हुई अपनी भगिनी पति सहस्त्राजुन के देखने लगी ॥३॥ जो कि बहुत सेनाओं से घिरा हुवा अनेक पैदल सिपाहियों तथा मस्त हाथियों के झुण्डों से युक्त ॥४॥ बड़े बड़े रथवाले और खड्गधारी बीरों के अत्यन्त तेज से शोभायमान ऐसे राजा को देख कर रेणु का मन में बहुत सोचने लगी ॥५॥ मेरी भगिनी बड़ी धन्य है जिसका ऐसा ऐश्वर्य वाला पति है मैं कैसी मन्द भागिनी हूं जिसके पति का जल लाने के लिए एक पात्र भी नही है ॥६॥ ऐसा वह सोच रही थी कि उसके शिर से मिट्टी का घड़ा जमीन में गिर कर चूर्ण होगया जमदग्नि ऋषि ने यह उसका मन का संकल्प जानकर ॥७॥ क्रोध में आकर लड़कों को कहने लगे जो कोई इस रंडी का शिर च्छेदन करेगा वह मेरा लड़का है इस प्रकार प्रत्येक लड़के से पूछा ॥८॥

इत्याज्ञाँ कृतवान्सार्थें सर्वे नेतीति चाब्रुवन् ।
तान् शशाप स्वपुत्रान्स यूयं प्रेता भविष्यथ ॥६॥
ततः परशुरामं च सस्मार मुनिसत्तमः ।
आविर्बभौ तदानीं स आज्ञापयेति च ब्रुवन् ॥१०॥
शिर छिंद्धीति चाज्ञप्त श्चिच्छेद परशुनातदा ।
मातुः शीर्षंच मेदिन्यां पपात मुनि वंदितः ॥११॥
जमदग्निस्तु संतुष्टो वरयेति वरंवदन् ।
साधु साधुच प्रोवाच रामन्त्वं मत्सुतः किल ॥१२॥
इति संवादिनंतंतु प्रोवाचवचनंतदा ।
मयित्वे यदि संतुष्टस्तदा जीवय मातरम् ॥१३॥
तथेत्युगत्वा मुनिस्तांतु जीवयामास भामिनोम् ।
ततःप्रभृति सारेवीरेणु काख्याँ ययौ मुने ॥१४॥
अद्यापि तत्रविख्याता स्मरणात्पापनाशिनी ।
शप्त जन्म कृतात्पापान्मुच्यते दर्शनान्नरः ॥१५॥
यःपूजयति तां देवीं रेणुकाख्याँ मुनीश्वरः ।
अयुतार्कविमानीस दिव्यलोके प्रमोदते १६॥

जब ऋषि जमदग्नि ने ऐसी आज्ञा की तो सब लड़कों ने उनका कहना नहीं माना उनको ऋषि ने शाप दे दिया कि तुम

सब प्रेत हो जावोगे ॥९॥ इसके पीछे ऋषियों में श्रेष्ठ जमदग्नि ने परशुराम जी को याद किया वह उसी समय प्रकट होकर कहने लगे कि हे भगवन् क्या आज्ञा है ॥९॥ हे मुनियों में पूज्य नारद ! परशुराम को देख कर ऋषि ने कहा कि अपनी माता का सिर छेदन करदो ऐसी आज्ञा पातेही उन्होंने परशु से माता का सिर काट डाला और वह गिर पड़ा ॥११॥ जमदग्नि ऋषि इस कर्म से परशुराम को सन्तुष्ट होकर कहने लगे कि बहुत अच्छा किया तुम मेरे प्रिय पुत्र हो इस लिये अब तुम वर मांगो ॥१२॥ इस प्रकार कहते हुये ऋषि को परशुराम जी बोले कि यदि आप मुझ पर प्रसन्न होतो माता को जीवित करदो ॥१३॥ ऋषि ने तथास्तु कह कर उस स्त्री को उस समय जीता कर दिया हे नारद ! उस समय से वह ऋषिपत्नि रेणुका देवी नाम से प्रसिद्ध हुई ॥१४॥ जो कि आज भी विद्यमान है जिस के स्मरण से पाप नाश होता है और दर्शन से सात जन्म के किये हुये पापों से मनुष्य छूट जाता है ॥१५॥ जो मनुष्य उस रेणुका देवी का पूजन करता है हे मुनीश्वर ! वह दस हजार सूर्य के समान कान्ति वाले विमान से दिव्य स्वर्ग लोक में आनन्द करता है ॥१६॥

अथान्यच्च प्रवक्ष्यामि क्षत्रियाँ तस्य कारणम् ।
एकदासुखमासीनां कृपाविष्टो मुनिः स्वयम् ॥१७॥
स्वपत्नी रेणुकाख्याँ हि प्रोवाच वचनंमुदा ।
प्रिये ! निमंत्रयस्व तं भोजनार्थं पतिव्रते ! ॥१८॥
स्वस्वस्रासहितं कार्त्तवीर्यार्जुनं महीपतिम् ।

समस्तसैन्य लोकै श्वः गजवाजिपदातिभिः ॥१६॥
इत्युक्त्वा सा प्रतिव्रता रेणुकाख्या मुनीश्वर ।
साध्वो निमंत्रयामास भगिनो भर्तृसंयुताम् ॥२०॥
निमंत्र्य सवलं भूपं जमदग्निस्तदा मुने ।
आनयामास स्वर्गात्तु कामधेनुं वहुप्रदाम् ॥२१॥
चकाराशनसभारान् खाद्यान् पेयान्सुसंस्कृतान् ।
लेह्यान् चोष्यान्तथाचर्व्यान्सर्वान्स्वादूत्तरांत्तथा२२
गृहाणि सौधतुल्यानि रम्याणि विविधानि च ।
अत्युच्चानि च विस्तीर्णशय्यानी मुनिपुंगव॥२३॥

इसके अनन्तर हे नारद अब मैं तुमको क्षत्रियों के नाश का कारण कहता हूं एक समय दयालु ऋषि सुख से बैठी हुई ॥१७॥ अपनी स्त्री रेणुका के प्रसन्नता पूर्वक कहने लगे कि हे प्रिये ! पतिव्रते तुम उस राजा के निमन्त्रण दो ॥१८॥ जो कि वह तुम्हारी बहिन के साथ संपूर्ण सेना हाथी घोड़े पैदल सबको लेकर हमारे यहां भोजन करे॥१९॥ हे मुनीश्वर! ऋषि ने उस स्त्री को जब ऐसा कहा तब पतिव्रता रेणुका ने सहस्त्रार्जुन के सहित अपनी बहिन को निमन्त्रण दिया॥२०॥ जमदग्नि ऋषि ने चतुरंगिणी सेना सहित राजा को निमन्त्रण देकर स्वर्गलोक से सम्पूर्ण पदार्थ के देने वाली कामधेनु को अपने आश्रम में मंगाया॥२१॥ उस कामधेनु के द्वारा भोजन सामग्री सब प्रकार के खाद्य पदार्थ पेय लेह्य चोष्य और

चावने योग्य पदार्थ तैयार किये हुए अत्यन्त स्वादु सब वस्तुओं को उस ऋषि ने तैयार कराया ॥२२॥ हे मुनि श्रेष्ठ ! इसके अतिरिक्त ऊंचे ऊंचे महलों के समान मनोहर और बहुत ऊंचे जिन में कि रमणीय विचित्र शय्यायें लगी हुईं हैं ऐसे अनेक भवन बनवाये ॥२३॥

अन्यानपि पदार्थाञ्च साधयित्वा मुनीश्वरः ।
आनयामानस राजानं भोजनाय सहार्जुनम्॥२४॥
सवलंच सपत्नीकं सहवाजि पदातिनम् ।
य स्ययस्य यथेच्छासी द्रचयित्वा मुनीश्वरः॥२५॥
आनाय्य सर्वभोज्यं च स तु तमददत्तथा ।
भुक्त्वा सतुष्टमनसः सर्वे एवाभवंस्तथा ॥२६॥
सविस्मितो नृपो भुक्त्वा तापसस्येदृशं तपः ।
येनमे सवलस्यापि भोजनं दत्तवान्मुनिः ॥२७॥
अथवा कामधूक्चेयं वर्तते तापसालये ।
तस्याएव प्रभावांच याचे तामेव तन्मुनेः ॥२८॥
इतिस चिंत्य राजातु मुनि प्रोवाच सुव्रत ।

॥ राजो वाच ॥

जमदग्ने इयं धेनु र्दीयतां मम सर्वथा ॥२९॥

भोजनांते दक्षिणायै सवलस्य महामुने ।
इत्युक्तः प्राह राजानं मुनिर्मधुरया गिरा ॥३०॥

॥ जमदग्नी उवाच ॥

प्रभो नाथ ! मदीयेयं धेनु र्नास्ति महीपते ।
इयं वै ब्रह्मणो धेनुः कथं दास्यामि ते नृप ॥३१॥

और भी बहुत से पदार्थों का प्रबन्ध कर के मुनियों में श्रेष्ठ जमदग्नि ने राजा सहस्रार्जुन को भोजन के लिए बुलाया ॥२४॥ पत्नी के सहित तथा हाथी घोड़े पैदल सब प्रकार की सेना के साथ राजा को बुला कर जिसे जैसी इच्छा थी सब को बैठा कर महर्षि जमदग्नि ने ॥२५॥ सब प्रकार के भक्ष्य भोज्य पदार्थों को मंगाकर राजा को भोजन कराया वह राजा और उसकी सेना सबके सब प्रसन्न चित्त होगये ॥२६॥ राजा भोजन करके विस्मित हो गया कि इस तपस्वी ऋषि का कैसा बड़ा तप है जिसने हमारी सारी सेना के सहित शीघ्र और अनायास से ही भोजन करादिया ॥२७॥ यह तो यह जो कामधेनु इस तपस्वी के आश्रम में है इसी का प्रभाव मालूम पड़ता है इस लिये इसी गाय को ऋषि से मांगना चाहिये॥२८॥ हे सुव्रत ! ऐसा विचार कर वह राजा सहस्रार्जुन जमदग्नि से कहने लगा। राजा ने कहा कि हे जमदग्ने ! आप इस कामधेनु को मुझे दे दीजिये ॥२९॥ हे मुने ! भोजन के अंत में सम्पूर्ण सेना सहित मेरी दक्षिणा में यह गाय देदो यह सुन कर ऋषि मधुर वाणी से राजा को कहने लगे ॥३०॥

जमदग्नि ने कहा, राजन्! यह गाय मेरी नहीं है। हे पृथ्वी के पति! यह ब्रह्मा जी की गाय है इस लिये मैं आपको इसे कैसे देदूं ॥३१॥

॥ राजो वाच ॥

अवश्यमेवदातव्या धेनु में मुनिपुंगव ।
नोचेत्त्वां हन्मिखड्गेन मा कुरुष्वात्र सशयम् ॥३२॥

॥ जमदग्नो उवाच ॥

गृह्यताँ कामधेनुर्वै यदि ते वाहुजंवलम् ।
त्वामियं कामधेनुश्च भस्मसात्प्रकरिष्यति ॥३३॥

॥ स्कन्द उवाच ॥

इत्युक्तो मुनिना राजा क्रोधसंरक्त लोचनः ।
खड्ग निःसार्य कोशात्तु शिरश्चिच्छेद सो मुनेः॥३४॥
अथ धेनुसमीपे तु गत्वा तां समुपाहरत ।
सापि क्रोधेन तप्तांगी स्वांगेभ्यो यवना नथ ॥३५॥
वहून्वहुविधान् क्रूराञ्चिःससार तदामुने ।
यत्रनैः क्रूरचेष्टैश्च खड्ग वर्मलसत्करैः ॥३६॥
भूमि यस्य बलं सर्वं त्वयं नीतं महात्मभिः ।

हते सैन्ये कामधेनु र्ययौ स्वर्भवनं प्रति ॥३७

लज्जाविष्टमना राजा ययौ केदार मंडले ।

ब्रह्महत्यापनोदाय यत्र भागीरथीस्मृता ॥३८॥

तत्रस्थित्वा तपस्तप्त्वा मुमुचे ब्रह्म हत्यया ।

अथ कालेन महतासमायातो महामुने ॥३९॥

राजा बोला हे मुनि श्रेष्ठ ! यह धेनु मुझ को अवश्य देनी पड़ेगी नहीं तो मैं तेरे को अभी खड्ग से काट डालूंगा इसमें संशय मत करना ॥३२॥ जमदग्नि ऋषि बोले यदि तेरी भुजा में कुछ बल है तो इस कामधेनु को लेले यह गाय तेरे को सेना सहित भस्म कर डालेगी ॥३३॥ स्कंद जी बोले हे नारद जब मुनि ने ऐसा कहा तो राजा ने क्रोध से लाल आंखें कर के कोश से तलवार निकाल कर जमदग्नि ऋषि का सिर काट डाला ॥३४॥ इसके बाद वह गाय के पास जा कर उसको हरने लगा वह क्रोध से तप्त हुई कामधेनु अपने अंगों से यवनों को ॥३५॥ जो कि असंख्य और अनेक प्रकार के क्रूर थे उनको उत्पन्न करने लगी क्रूर चेष्टा वाले हाथ में ढाल तलवार लिये हुये यवनों ने ॥३६॥ उस राजा की सम्पूर्ण सेना नष्ट कर दी । सेना के नष्ट होजाने पर कामधेनु अपने ब्रह्मलोक में चलीगई ॥३७॥ वह राजा भी लज्जित होकर ब्रह्म हत्या को दूर करने के लिये केदार मंडल में गया जहां भागीरथी का निर्मल प्रभाव है ॥३८॥ वहां कुछ काल रह कर तप करके ब्रह्म हत्या से मुक्त हो गया इसके अनन्तर कुछ काल के पीछे हे नारद जी परशुराम जी फिर वहां आये ॥३९॥

परशुरामस्ततः क्षेत्रे रेणुका तमुवाचह ।
पुत्र ! पश्येदृशं दुःखं कार्तवीर्य दुरात्मना ॥४०॥
त्वत्पितुश्च शिरश्छिन्नं तद्विचारय सांप्रतम् ।
येनमे हृद्गतं दुःखं विनश्ये त कथंचन ॥४१॥
श्रुत्वा तद्वचनं मातुः क्रोधसंरक्त लोचनः ।
दंतै रोष्ठौ पीडयंश्च प्रोवाच वचनं रूषा ॥४२॥
प्राणोत्क्रमण कालेतु मत्पित्रा किमुदाहृतम् ।
तत त्वं कथय मे मातर्यदि ते मय्यनुग्रहः ॥४३॥
श्रुत्वा तद्व चनं माता सुतं प्रोवाच रेणुका ।
त्रिः सप्तकृत्वस्त्वत्पित्रा कराभ्यां भुविताडितम् ॥४४॥
ताडयित्वा दिवंयात श्चान्यत्किंचिन्न तत्कृतम् ।
इतिमातुर्वचः श्रुत्वा मन्युना कलुषेक्षणः ॥४५॥
प्रतिज्ञांकृत वान् राम एक विंशतिवारकम् ।
करिष्यामि क्षत्रि शून्यां सर्वथैव वसुंधराँ ॥४६॥
प्रतिज्ञाय ययौ रामो यत्रास्ते कार्तवीर्यकः ।
तेनसाकं महद्युद्धं चक्रे देवासुरं यथा ॥४७॥
ततस्तस्य सहस्रं हि वाहूनां परशुधारया ।
चिच्छेद तच्छिरश्चैव ततश्चान्यान्महीक्षितः ॥४८॥

रेणुका कहने लगी हे पुत्र! इस महान दुख को देखो। दुष्टात्मा सहस्रार्जुन ने ॥४०॥ तेरे पिता जमदग्नि का सिर काट दिया अब तुम इस पर विचार करो जिससे हृदय का दुःख किसी तरह दूर हो जाय ॥४१॥ माता का ऐसा वचन सुन कर क्रोध से जिनके लाल नेत्र हो गए ऐसे परशुराम जी ओठों को दांतों से दबाते हुए क्रोध से कहने लगे ॥४२॥ हे माता! मेरे पिता ने प्राणों के निकलते समय क्या कहा यदि तेरा मेरे ऊपर अनुग्रह है तो सत्य बतला ॥४३॥ रेणु का यह सुनकर बोली हे पुत्र! तेरे पिता ने इक्कीस बार हाथों से पृथ्वी को ताड़न किया था ॥४४॥ पृथ्वी में हाथ पटक कर स्वर्ग में चले गए इसके अतिरिक्त और कुछ नहीं किया माता का यह वचन सुनकर क्रोध से नेत्रों को भरे हुए ॥४५॥ परशुराम जी प्रतिज्ञा करने लगे कि मैं पृथ्वी को सब प्रकार से इक्कीस बार क्षत्रियों से रहित कर दूंगा ॥४६॥ यह प्रतिज्ञा करके परशुराम जी जहां राजा कार्तवीर्य था वहां चले गये और उसके साथ युद्ध करने लगे जैसे कि देवासुर संग्राम हुआ था ॥४७॥ इसके अनन्तर उस राजा की हजार भुजाओं को अपनी परशुधारा से सिर के सहित काट डाला इसके पीछे और राजाओं का संहार करने लगी ॥४८॥

जघान क्षत्रियन् रामोमृधेत्रिः सप्त संख्यया ।
ततोरामावतारे हि रामेणाकृत बुद्धिना ॥४९॥
संगतोऽसौ महाराज रूपेस्मिन् श्रीहरौवलम् ।
चिक्षेप सहसातत्र धनुर्मार्गेण नारद ॥५०॥

तपसे प्रययौ विप्र सौम्यबाराणसीस्थले ।
इतिते कथितो विप्रसौम्यवाराणसी भवः॥५१॥
यंश्रुत्वा सर्व पापेभ्यो मुच्यते भवभीतितः ॥५२॥

परशुराम जी ने युद्ध में इक्कीस बार क्षत्रियों का नाश किया इस के पीछे रामवतार में भगवान रामचन्द्र जी से वाक् युद्ध किया ॥४९॥ हे नारद जब परशुराम जो रामचन्द्र जी से मिले तव उन्हों ने सहसा धनुष के द्वारा रामचन्द्र जी में सम्पूर्ण बल अर्पण कर दिया ॥५०॥ उस समय से परशुराम जी उत्तरकाशी क्षेत्र में तप करने के लिये चले गये। हे नारद सौम्यवाराणसी का यह वृतान्त हमने तुमसे कहा ॥५१॥ जिसको श्रवण कर मनुष्य पापों से और संसार के भय से छूट जाता है ॥५२॥

इति श्री स्कन्दे महापुराणे केदारखण्डान्तर्गत सौम्य वाराणसी माहात्म्ये भाषा टीकायां द्वितीयोऽध्यायः ।

श्री स्कन्दे महापुराणे केदारखण्डान्तर्गत सोम्यवाराणसी माहात्म्ये तृतीयोध्याय प्रारम्भ्यते।

॥ नारद उवाच ॥

कानिकानिचतीर्थानि तत्र सन्ति महामते ।
तेषां विस्तरतो ब्रूहि माहात्म्यं वदतांवर ॥१॥
तथा विशेष लिंगस्य पूजाया वैभवं वद ।
वारणावत माहात्म्यं सोद्भवं वक्तुमर्हसि ॥२॥

॥ स्कन्द उवाच ॥

शृणुयत्नेन सारं च कुंडं वै ब्रह्म संज्ञकम् ।
यत्र भागीरथी रम्या गँगाचोत्तरवाहिनी ॥३॥

नारद जी बोले कि हे महामते ! बोलने वालों में श्रेष्ठ स्कन्द जी ! उत्तकाशी में कौन कौन से तीर्थ हैं उनका माहात्म्य आप हमको विस्तार पूर्वक कहो ॥१॥ और विशेषतः लिंग पूजा का महत्व तथा उत्पति के सहित वारणावतपर्वत का माहात्म्य भी आप कथन करने योग्य हो ॥२॥ स्कन्द जी कहने लगे कि हे नारद तुम सावधान होकर श्रवण करो उत्तरकाशी में सार भूत एक ब्रह्म कुण्ड है जहां पर रमणीय गंगा भागीरथी प्रवेश करती हुई उत्तरकाशी को बहती है ॥३॥

तत्र स्नात्वा नरोयाति ब्रह्मलोकं सनातनम् ।
सप्त जन्मा र्जितैःपापै मु च्यते नात्र संशयः ॥४॥
स्नातका यं यमिच्छन्ति तंतं कामं लभंति ते ।
स्त्रियः पुरुषताँ यान्ति पुमांसो यान्ति देवताम्॥५॥
तज्जलस्पर्शमात्रेण ब्रह्म कुंडे चराचराः ।
निमु क्ताः सर्वपापेभ्यो विमुखा गर्भवेश्मसु ॥६॥
लतागुल्मश्च वृक्षाश्च तृणानि च मृगास्तथा ।
पशवः पक्षिणो वापि जलस्थलगताः पुनः ॥७॥
तत्तद्देहैर्विमुच्यन्ते तज्जलस्पर्शनादध्रुवम् ।
ज्ञानात्ततो भविष्यन्ति द्विजोत्तमास्तपस्विनः ॥८॥
ततो मयि च ते सर्वे शिवभक्ति परायणाः ।
शिवेलीना र्भविष्यन्ति योन्युद्भव विवर्जिताः ॥९॥
तदधो रुद्रकुंडंतु वर्तते भुविदुर्लभम् ।
स्नानं करोतियोभक्त्या तस्य पुण्यफलं श्रृणु १०
युगकोटिसहस्राणि रुद्रलोके सुखं वसेत ।
ततोऽवतीय भूमौतु सप्तद्वीपाधिपो भवेत् ॥११॥

उस ब्रह्म कुण्ड में स्नान करके मनुष्य अविनाशी ब्रह्मलोक में जाता है और सात जन्मों का किया हुआ पाप नष्ट होकर

वह मुक्त हो जाता है इसमें कुछ संशय नहीं ॥४॥ स्नान करने वाले मनुष्य जो जो अभिलाषा करते हैं उसको प्राप्त कर लेते हैं स्त्रियां अपने शरीर को त्याग कर पुरुष शरीर धारण करती हैं और पुरुष देवतारूप हो जाते हैं ॥५॥ ब्रह्म कुण्ड में उसके जल के स्पर्श मात्र से चराचर प्राणी सब पापों से छूट कर गर्भवास से विमुख हो जाते हैं ॥६॥ लतायें झाड़ वृक्ष घास तथा मृग पशु पक्षी आदि सब जन्तु जो जल या स्थल में रहने वाले हैं ॥७॥ वह उस ब्रह्मकुण्ड के जल के स्पर्श मात्र से अपने नीच शरीरों से छूट जाते हैं फिर शुद्ध ज्ञान के प्रभाव से तपस्वी उत्तम ब्राह्मण होते हैं ॥८॥ इसके अनन्तर वह सब ब्राह्मण जन्मान्तर में शिव भक्ति में तत्पर हुये जन्म मरण से रहित होकर मुक्त शिव में ही लीन हो जाते हैं ॥९॥ उस ब्रह्म कुण्ड के नीचे ही संसार में दुर्लभ एक रुद्रकुण्ड है जो मनुष्य भक्ति पूर्वक वहां स्नान करता है उसका पुण्य फल तुम श्रवण करो ॥१०॥ वह मनुष्य हजार करोड़ युग पर्यन्त रुद्र लोक वास करता है फिर पुण्य के अल्प होने पर पृथ्वी में जन्म लेकर सात द्वीपों का चक्रवर्ती राजा होता है ॥११॥

सभुक्त्वा सुख बाहुल्यं रुद्रभक्ति परायणः।
देहान्ते सभवेद्योगी गर्भवास विवर्जितः ॥१२॥
शिवेन सहलीयेत नात्रकार्या विचारणा।
तत्रैववर्ततेलिंगं दर्शनान्मुक्ति दायकम् ॥१३॥
सकृत्पश्यतियोलिंगं रुद्रेश्वर इति श्रुतम्।
मोह कञ्चुक मुत्सृज्य ज्ञानकंचुव सम्वृतः ॥१४॥

परिवारान्वयैर्युक्तो सुखं याति शिवालये ॥
अयुतार्काभयानेन सेवित श्चाप्सरोगणैः ॥१५॥
गीतवाद्यरसोपेतै र्धूयमानो हि चामरैः ॥
कल्पकोटिशतं दिव्यं शिवलोके वसेत्सुधीः ॥१६॥
ततोयास्यति निर्वाणं सर्व धर्म सुदुर्लभम् ॥
योनियंत्रं परित्यज्य ज्योतिरूपे प्रलीयते ॥१७॥
श्राद्धं यः कुरूते तत्र तस्य पुण्य फलं श्रृणु ॥
कुलमेकोत्तरं साग्रं तारितं तेनपैतृकम् ॥१८॥

वह संसार में रुद्रभक्ति में तत्पर होता हुआ अनेक प्रकार के सुखों को भोग कर शरीर के अन्त में गर्भवास से रहित योगी बन जाता है ॥१२॥ फिर वह शिव में ही लीन हो जाता है इसमें कुछ शंसय नहीं करना चाहिये उसी काशीक्षेत्र में दर्शन से मुक्ति देने वाला शिवलिंग है ॥१३॥ रुद्रेश्वर नामक लिंग को जो मनुष्य एक बार देख लेता है वह मोह के चोले को छोड़ कर ज्ञान के चोले से ढका हुवा ॥१४॥ अपने वंश तथा परिवार के सहित दस हजार सूर्यों के तेज के समान चमकने वाले विमान से अप्सराओं से सेवित होकर सुख पूर्वक शिवलोक में जाता है ॥१५॥ गायन बाजे आदि श्रृंगार रसों के सहित छत्र, चामरों से सेवित हुवा करोड़ों दिव्य कल्प तक वह विद्वान् शिवलोक में निवास करता है ॥१६॥ इसके अनन्तर सब धर्मों से भी दुर्लभ ऐसे निर्वाण पद को जाता है और गर्भवास के बंधन को त्याग कर ज्योतिरूप में लय हो

जाता है ॥१७॥ उस रुद्रकुण्ड में जो मनुष्य श्राद्ध करता है उसका तुम पुण्य फल श्रवण करो वह मनुष्य अपने अगले पिछले एक सौ एक पितृकुल को तार देता है ॥१८॥

तथैव मातृकं वापि सखि बन्धु जन स्यच ॥
गुरूणां चतथा राज्ञां श्वशुराणां कुलं तथा ॥१९॥
सकृतिपण्ड प्रदानेन प्रणोयद्ब्रह्म शा श्वतम् ॥
एत त्तीर्थ मवज्ञाय गयांयः परि धावति ॥२०॥
तैर्मर्त्यैः स्वकुलं विप्र पातितं नरके ध्रुवम् ॥
यदैत त्तीर्थ प्राप्तिर्न तदा गयां परि ब्रजेत ॥२१॥
तदधो वरणा यश्च गङ्गाया यत्र संगमः ॥
तत्रस्नातुः फलं वक्ष्ये श्रृणु त्वं मुनि सत्तम ॥२२॥
कुरुक्षेत्रे प्रयागे च वाराणस्यां हि सागरे ।
यत्पुण्यं कोटिधा स्नाना त्तथा बदरिकाश्रमे ॥२३॥
देवप्रयागे श्रीक्षेत्रे कोटिधा स्नान तो हियत् ।
तत्पुण्यं कोटि गुणितं प्राप्यते मज्जनात्सकृत २४
मोहशोकै र्विनिर्मुक्तो गर्भवासवि वर्जितः ।
श्री शिवे परलीयेत सत्यं सत्यं न संशयः ॥२५॥
तत्र पिंड प्रदाता च त्रिकोटि कुल मुद्धरेत् ।
अज्ञाना दपि मत्स्या द्या मज्जिता न पुनर्भवाः ॥२६॥

इसी प्रकार माता, मित्र, बन्धुवर्ग, गुरु, राजा, श्वशुर इनके कुल को भी ॥१९॥ एक बार पिंड देने से ही निर्भय ब्रह्मलोक में पहुँचा देता है इस तीर्थ की अवज्ञा करके जो गया की तरफ भागते हैं ॥२०॥ उन लोगों ने अपने कुल को अवश्य नरक में गिरा दिया है हे नारद! जब किसी कारण इस तीर्थ की प्राप्ति न होवे तब गया में जाना चाहिये ॥२१॥ उस रुद्र कुण्ड के नीचे जहां गंगा और वरुणा का संगम होता है हे मुनियों में श्रेष्ठ नारद! उस संगम में स्नान करने वाले को जो फल होता है वह कहता हूँ तुम सुनो ॥२२॥ कुरु क्षेत्र प्रयाग पूर्वकाशी गंगासागर तथा बद्रीकाश्रम में करोड़ों स्नान करने से जो पुण्य होता है ॥२३॥ इसी तरह देवप्रयाग श्रीनगर में करोड़ गुणा होकर मिलता है ॥२४॥ वह पुरुष फिर मोह शोक से रहित होकर गर्भवास से छूट कर श्री शिव जी में लीन होजाता है इसमें कुछ संशय नहीं ॥२५॥ उस संगम पर पिंडदान करने वाला अपने तीन करोड़ कुल का उद्धार करता है मत्स्यादि जलजन्तु भी यदि वहां अज्ञान से स्नान करलें तो उनका फिर पुनर्जन्म नहीं होता ॥२६॥

यो दद्या दणु मात्रं हि हिरण्यं भक्ति तत्परः ।
सोऽपियाति परं स्थानं यत्र गत्वा न शोचति ॥२७॥
स्नानं जपं च दानं वा वाराणस्यां कृताधिकम् ।
ब्रह्महत्यादिकं पापं यत्किंचित्कुरुते नरः ॥२८॥
तत्सर्वं विलयं यान्ति तज्जलस्पर्श मात्रतः ।
तत्रैव वर्तते लिंगं वरुणेशमिति श्रुतम् ॥२९॥

तद्दर्शी मनुजो भक्त्या मोक्षं प्राप्नो तितत्क्षणात् ।
सप्तजन्मार्जितैः पापैर्मुच्यते मुनि सत्तम ॥३०॥
ततश्चवसते शैवे पुरे रम्ये गणावृत्ते ।
ततः प्रलीयते तस्मिन् योनिसंकट वर्जितः ॥३१॥
अथासी यत्र गंगायाँ संगमे तत्र मानवाः ।
कृमि कीट पतंगाद्याः स्नाता यान्तिविमुक्तताम् ३२
तत्रदत्तं हुतं तप्तम् मृतत्वाय कल्पते ।
अत्रान्यच्चप्रवक्ष्यामि इतिहासं पुरातनम् ॥३३॥
अत्याश्चर्यंकरं पुंसां पठनात्पाप नाशनम् ।
अयोध्यायां नृपः कश्चिद्बभूव विनयान्वितः ॥३४॥
नाम्नासौ चन्द्र वर्म्मेति ख्यातो बहु सुतान्वितः ।
बहुस्त्रीभिः परिवृतो महदैश्वर्य संयुतः ॥३५॥

जो मनुष्य परिमाणमात्र सुवर्ण को भक्ति पूर्वक दान करता है वह उस परम पद को जाता है जिसमें जाकर कोई शोक चिंता आदि नहीं होते ॥२७॥ उत्तरकाशी तीर्थ में स्नान दान जप किया हुवा अधिक हो जाता है ब्रह्महत्यादि जो कुछ पाप मनुष्य करता है ॥२८॥ वह सब वरुणासंगम के जल केस्पर्श मात्र से नष्ट होता है। उसी संगम पर वरुणेश नाम से प्रसिद्ध शिवलिंग है ॥२९॥ उसका दर्शन करने वाला मनुष्य एक क्षण में ही मुक्त होता है और हे नारद ! सात

जन्मों के किये हुये पापों से भी छूट जाता है ॥३०॥ इसके अनन्तर वह शिव गणों से घिरे हुये रमणीय शिवलोक में वास करता है अन्त में योनि संकट से छूट कर शिव में लीन हो जाता है ॥३१॥ हे नारद! अब जहां गंगा और असी का संगम है वहां मनुष्य तथा कृमि कीड़े पतंग आदि स्नान कर मुक्त हो जाते हैं ॥३२॥ उस संगम में हवन दान तप आदि किया हुवा अक्षय हो जाता है इस तीर्थ के विषय पर मैं तुमको एक प्राचीन इतिहास कहता हूँ ॥३३॥ जो अत्यन्त आश्चर्य-जनक और पाठ करने से मनुष्यों के पाप को नाश करने वाला है अयोध्या में कोई विनय से युक्त एक राजा हुवा ॥३४॥ जिस का नाम चन्द्रशर्मा प्रसिद्ध था वह बहुत पुत्र स्त्री आदियों से युक्त बड़े ऐश्वर्य वाला था ॥३५॥

दत्तानि तेन दानानि गोभूवासांसिच द्विज ।
महादानानि विप्रेभ्यो ददौ धान्याचलादिकम् ३६
तथा ब्रह्माण्ड दानं सुवर्णं पृथवीं तथा ।
व्रतानि च चकारासौ बहुपुण्यानि नारदः ॥३७॥
पुराणानि च शुश्रावतीर्थानां वैभवं तथा ।
अधिकं सर्व तीर्थेभ्यो मत्त्वा केदार मण्डलम् ॥३८॥
विरक्ता भूत्तदा सोथ वैभवे च सुख प्रदे ।
सर्वं गृहाश्रमं त्यक्त्त्वा गमनाय मनोऽकरोत ॥३९॥
केदारेश्वर यात्रायाँ खड्गचर्म धरः सुधीः ।

सोपान युक्तो ययौ सोथ गंगाद्वारे महामुने ॥४०॥
आगत्य ब्रह्मकुंडं च स्नात्वा दक्षेश्वरं विभुम् ।
प्रजापतिं च नत्वाथ कुब्जाम्रकं समाययौ ॥४१॥
तत्रापि बहुशःस्नात्वा प्रणाम्यभरतं मुदा ।
लक्ष्मणाश्रम मागत्य पूजियित्वा च तं विभुम्॥४२॥
वशिष्ठाश्रम मागत्य दृष्ट्वा तत्रं महा मुनिम् ।
देवप्रयागे आगत्य स्नात्वा दृष्ट्वा रघूद्वहम ॥४३॥

हे नारद जी ! उसने अनेक प्रकार के गौ भूमि वस्त्रादि बड़े बड़े पर्वत के समान धान्य राशि आदि महादान ब्राह्मणों को दिये ॥३६॥ हे नारद ! उस राजा ने सुवर्ण पृथ्वी तथा ब्रह्माण्ड का भी दान किया और बहुत से पुण्यदायक व्रत करता था ॥३७॥ और तीर्थों के माहात्म्य तथा पुराणों को वह श्रवण करता था फिर उसने सब तीर्थों से केदार मंडल का अधिक माहात्म्य समझा ॥३८॥ तब वह सुख देने वाले ऐश्वर्य को सब गृहस्थाश्रम का त्याग कर विरक्त होगया और केदारखण्ड में जाने के लिए संकल्प करने लगा ॥३९॥ तदन्तर ढाल तलवार को हाथ में लेकर बुद्धिमान राजा अपने जूते पहन कर केदारखण्ड की यात्रा के लिये हरिद्वार में पहुँचा ॥४०॥ वहां ब्रह्मकुण्ड में स्नान कर कनखल में दक्षप्रजापति का दर्शन नमस्कार कर पीछे कुब्जाम्रक हृषीकेश में आया ॥३१॥ वहां कुब्जाम्रक कुण्ड में स्नान कर उसी के समीप रघुनाथ जी का दर्शन कर के फिर भरत जी का दर्शन करते हुये लक्ष्मणझूले में

आकर उस भगवान् लक्ष्मण जी का पूजन किया ॥४२॥ इस के बाद वशिष्ठाश्रम में वशिष्ठ महामुनि का दर्शन करके देव-प्रयाग में स्नान कर रघुनाथ जी का दर्शन किया ॥४३॥

ययौ तत्र महाक्षेत्रं गंगा भिल्लाँ गनाशनम् ।
मिलिता तत्र स ंगेतु सस्नौ पुण्यप्रदे मुने ॥४४॥
ततो गच्छेत्सौम्यकाशी मज्ञानात्स महाशयः ।
यत्रासो गंगयोः स ंगस्तत्रा मज्जन्मुदान्वितः॥४५॥
आगत्य तीरे वस्त्राणि परिधाय महामतिः ।
नापश्यच्चर्मकोशंच उभेचोपानहौ तथा ॥४६॥
इतस्ततो भ्रमन्सोथं चिन्तयन् तदहेतुकम् ।
गतं कुत्र ममातीव प्रियंवस्तु न वेद्मि तत ॥४७॥
वदतस्तस्य क्षेत्रस्य पुरस्तात्कृत कर्मणः
आविर्बभुस्त्रिनेत्राश्च शूलिनो वृषभध्वजाः ॥४८॥
गज कृति वसानाश्च व्याघ्र चर्म परिवृताः ।
सशशांकार्द्ध भालीकाँस्तान्दृष्ट्वा विस्मयावृतः ४९
चिन्तयन् शिवरूपान्वै धन्योऽहं कृत बुद्धिमान् ।
पश्येयं शिवरूपांश्च इमानाश्चर्य्य कारिणः ॥५०॥

शिव एकोऽस्ति सर्वत्र पुराणे परिं गीयते ।
अद्यैव बहुधा दृष्टो मया एकः शिवस्तथा ॥५१॥

हे मुने वहां से आगे जहां गंगा और भिलंगना का संगम है उस महाक्षेत्र नामक टिहरी में जाकर पुण्य देने वाले संगम पर स्नान किया ॥४४॥ इसके अनन्तर वह अज्ञान से सौम्य-काशी (उत्तरकाशी) में महान आशय वाला वह राजा जा पहुँचा जहां असी और गंगा का संगम है वहां प्रसन्नतापूर्वक स्नान करने लगा ॥४५॥ स्नान करके किनारे पर आया और वस्त्रों को पहिन कर देखा तो अपनी तलवार का म्यान और दोनों जूते नहीं हैं ॥४६॥ वह राजा इधर उधर घूमता हुवा उसका कारण सोचने लगा कि मेरी प्रिय वस्तु कहां चली गई यह मैं नहीं जान सकता ॥४७॥ राजा कृतकर्मा के इस तरह मन में कहते हुये उस असि संगम क्षेत्र के सामने तीन नेत्र वाले, शूल को धारण किये बैल पर चढ़े हुये शिवगण प्रकट हुये ॥४८॥ जोकि हाथी के चर्म को धारण किये हुये और व्याघ्र के चर्म को ओढ़े हुये थे जिनके मस्तक में अर्ध चन्द्रमा विराजमान ऐसे उनको देख कर राजा बहुत चकित हुआ ॥४९॥ उनको शिवरूप समझता हुआ विचारने लगा कि मैं धन्य हूँ शुद्ध बुद्धि वाला हूँ जो कि आश्चर्य करने वाले इन शिव रूपों को मैं देखता हूँ ॥५०॥ परन्तु सब जगह पुराणों में एक ही शिव वर्णन किया गया है। इस समय तो मैंने एक ही शिव बहुत प्रकार का देख लिया है॥ ५१॥

॥ स्कन्द उवाच ॥

अत्याश्चर्य्यंतुतज्ज्ञात्वार्पय पृच्छत्तु तांस्तदा ॥
विनयावनतो भूत्वा उवाच वचनंत्विदम् ॥५२॥

चन्द्र वर्मोवाच ॥

केयूयंशिवरूपावै शशाँक कृत शेखराः ॥
तन्मेविस्तरतो ब्रूत यदिचेन्मयिवो दया ॥५३॥

॥ शिवरूपिण ऊचुः ॥

त्वंनजानासि भोभद्र जीवनमुक्तोसिसांप्रतम् ॥
वयंचत्वत्प्रसादेन शिवाजाता न संशयः ॥५४॥
खड्गो मेषो वृषो गोश्चतेषां चर्माणित्वत्सह ॥
समागतानितीर्थेऽस्मिन् सर्वेषांमुक्तिदायके ॥५५॥
एतत्तीर्थस्यसंसर्गाज्जातावैवृषभध्वजाः ॥
इतितेषां वचश्रुत्वा धन्योऽहमिति भावयन् ॥५६॥
दृष्ट्वातान् शिवरूपांश्चगतान्कैलाशपर्वते ॥
सोऽपितत्रैवलीनोऽभूच्छिवदेहेनसंशयः ॥५७॥
इतितेकथितं दिव्यं माहात्म्यंसंगमस्यहि ॥
तज्जलस्पर्शमात्रेण मुक्तिर्भवति दुर्लभा ॥५८॥

तत्रैवविष्णुकुंडंच यत्रस्नात्वाहरिर्भवेत् ॥
पिंडदानंकृतंतत्र कुलकोटिंसमुद्धरेत् ॥५९॥
अस्मिंस्तीर्थेमहाभाग वारणावतसंज्ञके ॥
तिस्त्रःकोट्योर्द्धकोटीश्चतीर्थानामपिसुव्रत ॥६०॥

स्कन्द जी बोले हे नारद ! यह अत्यन्त आश्चर्य जान कर उनको पूछने लगा विनय से नम्र होकर यह बचन बोला ॥५२ चन्द्र वर्मा बोला कि आप लोग चन्द्रमा को मस्तक में धारण किये शिव स्वरूप वाले कौन हो यह हमको आप विस्तार पूर्वक कहो यदि आप की मेरे ऊपर दया है ॥५३॥ शिवरूपी देवता कहने लगे हे भद्र ! तुम यह नहीं जानते हो तुम अब जीवन्मुक्त हो गये हो हम भी तुम्हारी कृपा से शिव हो गये हैं। इसमें संशय नहीं ॥५४॥ गैंड़ा भेड़; बैल, गाय इनके चमड़े तुम्हारे साथ मुक्ति देने वाले इस संगम में आये हुये थे ॥५५॥ सो इस तीर्थ के संसर्ग से सब शिव रूप हो गये हैं इस प्रकार उनका बचन सुनकर वह राजा मैं धन्य हूँ ऐसी भावना करने लगा ॥५६॥ फिर उन शिव रूपों को कैलास पर्वत में जाते देखकर वह राजा भी वहीं पर शिव रूप हो गया इसमें संशय नहीं ॥५७॥ हे नारद ! यह मैंने तुमको संगम का दिव्य माहात्म्य सुनाया जिसके जल के स्पर्श मात्र से दुर्लभ मुक्ति होती है ॥५८॥ इस प्रकार वहीं एक विष्णुकुण्ड है जहां स्नान करने से विष्णु रूप होता है और वहां पिंडदान कियो हुवा तीन करोड़ कुल का उद्धार करता है ॥५९॥ हे महाभाग ! इस वरणावत क्षेत्र में साढ़े तीन करोड़ तीर्थ हैं ॥

तत्रैवाभूत्पुराह्यत्र जातुकंगृहमुत्तमम् ॥
कौरवैःपांडवाःसर्वे धृतास्तत्रमहामते ॥६१॥
अद्यापि दृश्यतेतत्रदग्धंजतुतदन्तिके ॥
तत्रैवपर्वतेशक्तिर्यस्याःस्पर्शाद्विमुक्तिभाक् ॥६२॥
अधःशेषस्यशिरसि धृतासा परदेवता ॥
राजराजेश्वरीदेव्याः साशक्तिः परमास्मृता ॥६३॥
यैर्दृष्टासामहाशक्तिस्ते यान्तिपरमांगतिम् ॥
समारोहतितत्शैलं वारणावतसंज्ञकम् ॥६४॥
अश्वमेधसहस्रस्य फलंस्यात्तुपदेपदे ॥
निःसरन्तिचयानद्यस्तस्माद्यानिजलानिच ॥६५॥
तत्सर्वंजान्हवीतुल्यं कथितंतुमहर्षिभिः ॥
ततोवैदक्षिणेभागे बिलमेकं महत्तरम॥६६॥
तस्मिन्महातपानाम ऋषिरास्तेस्मरन् हरिम् ॥
अन्येऽपिचैव मुनयोवर्तते वहवो मुने ॥६७॥
सन्यस्त सर्वकर्माणो मुक्तिमार्गेव्यवस्थिताः ॥
निर्द्वन्द्वानिरहंकाराः काशीविश्वेश्वरावनु ॥६८॥

हे विशाल बुद्धिवाले नारद ! उस क्षेत्र में पहिले जतु गृह लाक्षा भवन बना हुवा था जहां कौरवों ने पांडवों को बन्द

कर जला दिया था ॥६०॥ इस समय भी उस भवन में लाख दिखाई देता है उस लाक्षा गृह के समीप शक्ति है जिसके स्पर्श से मुक्ति होती है ॥६२॥ वह शक्ति राजराजेश्वरी राजाओं की कुल देवी की है जोकि नीचे शेष भगवान् के सिर पर रखी है ॥६३॥ जिन महापुरुषों ने उस शक्ति का दर्शन किया है वह परम गति को प्राप्त होते हैं जो वारणावत नामक पर्वत के ऊपर चढ़ता है ॥६४॥ उसके एक एक पद रखने में हजारों अश्वमेध यज्ञ का फल होता है और जितने नदी नाले उस पर्वत से निकलते हैं ॥६५॥ वह सब जान्हवी के समान हैं यह ऋषियों ने कहा है उस उत्तरकाशी के दक्षिण का तरफ पर्वत में एक बहुत बड़ी गुफा के ॥६६॥ बिल में एक महातप नाम का ऋषि विष्णु का चिन्तन करता रहता था और भी बहुत से ऋषि वहां रहने वाले हैं ॥३७॥ जिन्होंने सब कर्मों का त्याग कर मुक्ति मार्ग का आश्रय लिया है और निर्द्वन्द अहंकार से रहित हुए काशी विश्वनाथ का ॥ ६८॥

स्मरन्तः परयाभक्त्याश्रन्येचापितृणद्रुमाः ॥
सरीसृपाःपक्षिणश्चतथान्येजीवजन्तवः ॥६९
निवसन्तिस्थलेरम्येछन्नरूपामहर्षयः ॥
कलौनास्त्येव नास्त्येव पापिनांगतिरन्यथा ॥७०॥
अस्मात्क्षेत्रवराधीशान् मुक्तिमार्गप्रदर्शकात ॥
तमात्सर्वप्रयत्नेन इदंस्थानं नसंत्यजेत ॥७१॥
इयमुत्तरकाशीहि बिनाभैरबयातनात ॥

ददातिपरमांसिद्धिमन्यत्क्षेत्रेषुदुर्लभम् ॥७२॥
इयमेवपरंस्थानं चतुर्वर्गप्रसाधकम् ॥
यःसप्तपंचरात्रं वैनिराहारोजितेन्द्रियः ॥७३॥
विश्वेश्वरं महालिंगं रुद्राध्यायमनुस्मरन् ॥
अभिषेकंप्रकुर्वाणोदुर्लभं चापिसाधयेत् ॥७४॥
सर्वतीर्थेषु यत्पुण्यं सर्वयज्ञेषु यत्फलम् ॥
तत्पुण्यंकोटिगुणितंमभिषेकाल्लभेन्नरः ॥७५॥
वृहद्रथंतराभ्याँयः शतकृत्वःशिवंभजेत् ॥
स्नापयेच्चतथा ताभ्याँ सस्वयं वृषभध्वजः ॥७६॥

परम भक्ति से चिन्तन करते हैं और भी तृण लता वृक्षादि पक्षी, सर्प अनेक प्रकार के जो जीव जन्तु हैं ॥६९॥ वह सब ऋषि गुप्त रूप से उस रमणीय स्थान में निवास करते हैं। इस काशी क्षेत्र के अतिरिक्त कलियुग में पापियों की गति किसी प्रकार की नहीं है ॥७०॥ मुक्ति मार्ग को दिखाने वाले सब से श्रेष्ठ इस क्षेत्र से अन्य कोई नहीं है इस लिये सब प्रयत्न से इस स्थान को नहीं छोड़ना चाहिए ॥७१॥ यह उत्तरकाशी बिना भैरव यातना अर्थात् भैरव उपासना के बिना ही उत्तम सिद्धि देती है जो अन्य तीर्थों में मिलनी दुर्लभ है ॥ ७२ ॥ चतुर्वर्ग जो धर्म अर्थ काम मोक्ष है इसका साधन यही एक स्थान है जो पाँच सात रात्रि निराहार और जितेन्द्रिय होकर ॥७३॥ महालिंग विश्वेश्वर के रुद्राध्याय का चिन्तन करता

हुआ अभिषेक करता करता है वह दुर्लभ को भी सिद्ध कर लेता है ॥७४॥ सब तीर्थों में जो पुण्य है और सब यज्ञों में जो फल है वह फल यहां रुद्राभिषेक से करोड़ गुणा हो जाता है ॥ ७५ ॥ जो मनुष्य वृहद्रथंतर नमक और चमक से शिव का भजन पाठ तथा अभिषेक भी करता है वह स्वयं ही महादेव है ॥७६॥

यंयंचिन्तयतेकामं तंतंप्राप्नोतिनिश्चितम् ॥
राज्यभ्रष्टोऽपियोराजा सोऽत्रशक्तिंसमर्चयेत् ॥७७॥
उपचारैःषोडशभिः पंचभिर्वायथाविधि ॥
एवं मासंतुयोराजा कुरुते कारयेदपि ॥७८॥
प्राप्नोति राज्यंविपुलं हतशत्रु र कंटकम् ॥
अपुत्रोदशधातत्र स्नापनंदुग्धवारिणा ॥७९॥
करोतिशक्त्याविघ्नेश सपुत्रंलभतेध्रुवम् ॥
विद्यार्थीयस्तत्रगच्छेत्तस्मन्वै शक्तिमण्डले ॥८०॥
जपेत्सारस्वतंमंत्रं निराहारोजितेन्द्रियः ॥
लभते दशरात्रेणप्रसादं पुरुषस्तया ॥८१॥
निर्द्रव्योयोद्विज श्रेष्ठकुटुंबाभिद्रतः परम् ॥
तस्मिन्नेवस्थलेरम्ये गच्छेदीशमनुस्मरन् ॥८२॥
सप्तरात्रंनिराहारो जपेत्पञ्चाक्षरंमनुम् ॥

प्राप्नोति परमांलक्ष्मीं मोदतेराजवत्सदा ॥
मृतोऽसौयत्रकुत्रापि मुक्तोभवति सर्वथा ॥
पंचक्रोशात्मकस्यास्य यःकरोतिप्रदक्षिणाम् ॥८४॥

जो जो वह कामना करता है उसको निश्चय से प्राप्त करता है जो राजा राज्य से अलग हो गया हो वह यहां पर आकर शक्ति का पूजन करे ॥७७॥ षोडशोपचार अथवा पंचोप चार से ही विधि पूर्वक एक महीने तक जो राजा पूजन करे अथवा करावे ॥७८॥ वह शत्रु से रहित निष्कंटक बहुत बड़े राज्य को पाता है जिसका पुत्र न हो वह दस वार दूध जल से ॥७९॥ शक्ति जी का स्नान कराता है वह सुपुत्र पाता है विद्या की इच्छा वाला उस शक्ति मन्दिर में जाकर ॥८०॥ जितेन्द्रिय निराहार रह कर जो सरस्वती का मंत्र स्तोत्र जपता है उसको दस रात्रि बीतने पर देवी का वरदान होता है ॥८१॥ हे नारद ! निर्धन मनुष्य कुटुम्ब से अधिक सताया हुवा उसी मनोहर स्थल में जाकर शिव का ध्यान करता हुआ ॥८२॥ सात रात्रि तक निराहार रह कर पंचाक्षर मंत्र का यदि जप करे तो वह अनन्त लक्ष्मी को पाता है और राजा के समान सुख भोगता है ॥८३॥ इस उत्तरकाशी क्षेत्र के अन्दर जो जहां कहीं भी मर जाता है वह अवश्य मुक्त होता है और जो पांच कोश विस्तृत इस काशी क्षेत्र की परिक्रमा करता है ॥८४॥

सप्तद्वीपवतीतेन परिक्रान्ता वसुंधरा ॥
गोचर्ममात्रा मपिदद्यादत्र वसुंधराम् ॥८५॥

सप्तद्वीपवतोनाथः सभवेत्पुरुषोत्तमः ॥
त्रुटिमात्रंचयःस्वर्णं प्रदद्याद्वेदवद्विजे ॥८६॥
तेनदत्तं भवेतसर्वं जगच्चसचराचरम् ॥
अभयंसर्वभूतेभ्यो योदद्यात्तत्र नारद ॥८७॥
सस्वयंनीलकंठःस्या दुमयासहमोदते ॥
पंचक्रोशात्मके क्षेत्रेनैवपापंसमाचरेत् ॥८८॥
यदन्यत्रकृतंकर्म तदत्रपरिनश्यति ॥
अत्रयत्कृयते कर्मवज्रलेपायकल्पते ॥८९॥
अन्यत्रकृतपापानि क्षेत्राद्वाह्यपतंतिहि ॥
अस्मिन्यत्कृयतेकर्म तदस्थिषुपरिष्कृतम ॥९०॥
अस्मत्स्थानात्परंस्थानं न दृष्टंक्वापिनारद ॥
यत्रभागीरथीसाक्षा द्यत्रविष्णुसनातनः ॥९१॥

उसने सात द्वीप वाली पृथ्वी की परिक्रमा करली। जो यहाँ आकर गो चर्म के बराबर पृथ्वी का दान करता है ॥८५॥ वह सात द्वीप वाली पृथ्वी का सर्वोत्तम राजा होता है और जो मनुष्य एक त्रुटि मात्र भी वेदपाठी ब्राह्मण को सुवर्ण दान करता है ॥८६॥ उसने सम्पूर्ण चराचर संसार का दान कर दिया है जो वहां सब प्राणियों को भय से बचा कर अभयदान करता करता है हे नारद ॥८७॥ वह स्वयं नीलकंठ होकर पारवती के

साथ विहार करता है पांच कोश के इस काशी क्षेत्र में कदापि पाप न करे ॥८८॥ जो अन्य तीर्थों में किया हुवा पाप है वह इस क्षेत्र में नष्ट हो जाता है और यहां पाप किया जाय तो वह बज्रलेप अमेट हो जाता है ॥८९॥ दूसरे तीर्थों में किए हुये पाप काशी के बाहर हो रह जाते हैं जो यहां किया हुवा पाप है वह उसकी हड्डियों में समा जाता है अर्थात् सूक्ष्म शरीर से जा मिलता है ॥९०॥ हे नारद इस स्थान के सिवाय दूसरा तीर्थ-स्थान हमने कहीं नहीं देखा जहां साक्षात गंगा भागीरथी और अनादि विष्णु हैं ॥९१॥

यत्रदेवी भवानीशः प्रमथैस्सहतिष्ठति ॥
तस्य पूर्वोत्तरेपार्श्वे वायुत्तीर्थमिति श्रुतम् ॥९२॥
यत्रवायुः पुरा तप्त्वा तपः परम दारुणम्
दिक्पालत्वं यतःप्राप्तंतदेत द्वायुत्तीर्थकम ॥९३॥
वायव्येति समाख्याता नदी परम पावनी ॥
यस्यांस्नात्वानरोयाति वायुलोकंनसंशयः ॥९४॥
तत्तोवै दक्षिणेभागे योजनार्द्धे मुनीश्वर ॥
यमतीर्थमितिख्यातं यमादर्शन कारकम् ॥९५॥
यावद्वै तिलबीजेन भूमिराच्छाद्यते मुने ॥
तत्र तीर्थ त्रयंबोध्यं ततस्तीर्थ मयी पुरी ॥९६॥
संसार भयभीतानाँ शरणं सौम्यकाशिका ॥

यावंत्यत्र महाभाग ह्यश्मकूटानिसंतिवै ॥९७॥
तानिवैशिवलिंगानि नात्रकार्या विचारणा ॥
इदंते कथितंसर्वंमुक्ति क्षेत्रंतथोत्तरे ॥
अतःपर तरंनास्ति तीर्थंमुक्ति प्रदायकम् ॥९८॥

जहां पारवती देवी का स्वामी शिव जी अपने गणों के साथ रहते हैं उससे पूर्व उत्तर के बीच में वायु तीर्थ प्रसिद्ध है ॥९२॥ जहां पूर्वकाल वायु ने बड़ा घोर तप करके दिक्पाल का पद पाया था इसलिये वह वायुतीर्थ है ॥९३॥ उस तीर्थ में वायव्य नाम को परम पवित्र एक नदी है जिस में स्नान करके मनुष्य वायुलोक में चला जाता है इसमें संशय नहीं ॥९४॥ उसमें दक्षिण की तरफ आधे योजन की दूरी पर यम तीर्थ है हे मुनीश्वर! उस तीर्थ की यात्रा से फिर यमराज का दर्शन नहीं होता ॥९५॥ हे नारद! एक तिल के बीज से जितनी भूमि ढक जाती है उतनी भूमि में तीन तीर्थ होते हैं इसलिये उत्तर-काशी तीर्थ मयी पुरी है ॥९६॥ संसार के भय से डरे हुये मनुष्यों के लिये एक उत्तरकाशी ही शरण है हे महाभाग! जितने इस क्षेत्र में पत्थरों के ढेर हैं ॥९७॥ वह सब शिवलिंग हैं इसमें तर्क नहीं करना चाहिये। इस से दूसरा तीर्थ मुक्ति देने वाला कोई नहीं है ॥९८॥ उत्तराखंड में जो मुक्तिक्षेत्र है उसका वृतान्त हमने सब तुमको सुनाया। पृथ्वी में पापियों के मोक्ष देने वाले तीन तीर्थ हैं ॥९९॥

इदंते कथितं सर्वं मुक्ति क्षेत्रं तथोत्तरे ॥

पृथिव्यां त्रीणि क्षेत्राणि मोक्षदानिचपापिनाम् ९९
वाराणसी तथा पूर्वशालीग्रामारव्य तीर्थकम् ॥
यत्रपुण्या नदी श्रेष्ठागण्डकी नामविश्रुता ॥१००॥
मुक्तिक्षेत्रंद्वितीयंतुतद्धि जानीहि नारद ॥
याँश्रुत्वासर्व पापेभ्यो मुच्यते नात्रसंशयः ॥१०१॥
पुण्यं यशस्यमा युष्यं पापघ्नं सर्वकामदम् ॥
साख्यानं कथितंतेवै वाराणस्यास्तु वैभवम् ॥१०२॥
इतिश्रीस्कान्दे महापुराणे केदारखंडे सौम्यवारा-
णसी माहात्म्यं पञ्च नवतितमोऽध्यायः ॥३॥

पूर्व में बनारस दूसरा शालिग्राम तीर्थ जहां सब नदियों में श्रेष्ठ पवित्र गंडकी नदी है ॥१००॥ हे नारद ! दूसरा मुक्ति क्षेत्र उत्तरकाशी जान जिसका श्रवण करने से मनुष्य पापों से छूट जाता है ॥१०१॥ यह हमने तुमको पवित्र कीर्ति बढ़ाने वाला आयुकारक पाप नाशक उत्तरकाशी का माहात्म्य इतिहास पूर्वक सुना दिया है ॥१०२॥

इति श्री स्कान्दे महापुराणे केदारखण्डान्तर्गत सौम्य वारणसी माहात्म्ये भाषा टीकायां तृतीयोऽध्यायः ।

गढ़वाली प्रेस, देहरा दून में मुद्रित।

॥ ॐ ॥

तीर्थ यात्रा मार्ग प्रदीपिका ।

ऋषीकेश से पैदल रास्ता देवप्रयाग होते हुए यमुनोत्तरी १५२ मील है और गंगोत्तरी १७८ मील है और केदारनाथ गंगोत्तरी उत्तरकाशी होते हुए २९८ मील बद्रीनाथ गंगोत्तरी उत्तरकाशी होते हुए ३९९ मील, बद्रीनाथ से मेलचौरी ९७ मील। हृषीकेश से देवप्रयाग मोटर अथवा पैदल सड़क से ४४ मील है, देवप्रयाग से टिहरी २८ मील है और टिहरी से उत्तरकाशी ४८ मील है और नरेन्द्रनगर से उत्तरकाशी ८२ मील है। गंगोत्तरी से बद्रीनाथ २२१ मील है। और मन्सूरी से गङ्गोत्री यमुनोत्री होकर वापिस मन्सूरी ११४ मील। देवप्रयाग से उत्तरकाशी ७८ मील, मन्सूरी से उत्तरकाशी ६५ मील है।

सविस्तार रास्ता निम्नलिखित है—

रास्ता नं० १

देवप्रयाग से तैल धर्मशाला ८ मील।
तैल धर्मशाला से बन्डेरा १२ "
बन्डेरा से टिहरी ... १२ "
टिहरी से सिराई ... ५ "
सिराई से भैल्डियाना गाडुगाड ¼ चढ़ाई ६ मील

रास्ता नं० २

हृषीकेश से नरेन्द्रनगर तक मोटर सड़क करीबन ९ मील है और पगडन्डी से करीबन ७ मील है। डंडी कंडी व कुलियों का इन्तजाम टिहरी दरबार की ओर से यहाँ होता है।

नरेन्द्रनगर से आगराखाल	८ मील
फकोट ...	३ "
जाजल ...	५ "
नागणी १॥ मील चढ़ाई	५ "
चमुआ	५ "
टिहरी राजधानी	१२ "
नरेन्द्रनगर से टिहरी कुल	३८ "
टिहरी से भैल्डियाना	११ "

रास्ता नं० ३

हरिद्वार से देहरा दून तक रेल है और देहरा दून से मन्सूरी मोटर जाती है, देहरा दून से राजपुर तक ७ मील मोटर सड़क है। राजपुर से भी डंडी कंडी व कुलियों का इन्तजाम होता है मन्सूरी पैदल सड़क ७ मील, मन्सूरी से सुआखोली ६ मील, "सुआखोली से बाईं ओर एक सड़क पगडंडी धरासू में मिलती है" रास्ता ठीक नहीं।

सुआखोली से झालकी	२ मील,
धनोल्टी ...	८ "
कानाताल ...	८ "

यहां से १ मील पर २ सड़कें हो गई १ भैल्डियाना को दूसरी टिहरी को दाहिने हाथ।

बंडवाल गाऊं ...	४ मील
भैल्डियाना	४ "
रास्ता नं० १—देवप्रयाग से भैल्डियाना	४५ "
रास्ता नं० २—नरेन्द्रनगर से भैल्डियाना	४९ "
रास्ता नं० ३—मन्सूरी से भैल्डियाना	३८ "
भैल्डियाना से छाम	५ "
नगुण ...	५ "
धरासू ...	५ "

धरासू से बाएं हाथ की सड़क ४८ मील यमुनोत्तरी को जाती है। दाहिने हाथ की सड़क गङ्गोत्तरी को ७४ मील है। यहां से उत्तरकाशी १८ मील, डूंडा ९, नाकुरी ३॥

यमुनोत्तरी सड़क का रास्ता।

धरासू से कल्याणी	४ मील
बरपखाल 'गेउंला' ¼ मील चढ़ाई	५ "
सिलक्यारी	५ "
राड़ीधार ४ मील चढ़ाई	५ मील
डंडाल गाऊं उतार	२ "
सिमली उतार	२ "
गङ्गाणी	२ "
खैरात चौथाई मील चढ़ाई	२ "
जगन्नाथ 'कुथनोर'	३ "

यहां से उप्रीकोट पगडंडी का रास्ता १० मील और उप्रीकोट से ६ मील उत्तरकाशी।

कुथनोर से यमुना चट्टी	१ मील
ओजरी चट्टी २ मील चढ़ाई	२ "
डडोटी	२॥ "
राणा गांव	२ "
हनुमान चट्टी	२ "
खरसाली 'मार्कण्डेय तीर्थ' ४ मील चढ़ाई	४ मील
यमुनोत्तरी	४ मील
यमुनोत्तरी से गङ्गोत्तरी	९८ "
यमुनोत्तरी से वापिसी सिमली चट्टी	२५ "

यहां से कुछ आगे जंगठाली से फलाचेके दाडे तक चढ़ाई है, दाड़े से उत्तरकाशी विश्वनाथ दर्शन होते हैं आगे उतराई ४ मील।

सिगोट	७॥ "
नाकुरी	३॥ "
उत्तरकाशी	६ "

सड़क गङ्गोत्तरी।

धरासू से डुन्डा	९ मील
नाकुरी	३॥ "
वरुणा संगम	३ "
उत्तरकाशी	२॥ "

उत्तरकाशी से ५६ मील गङ्गोत्तरी।

उत्तरकाशी से अस्सी संगम २॥ मील, अस्सी संगम से डोडीताल १७ मील की दूरी पर है।

गवाणा ...	१ मील
मनेरी ...	५॥ "
कुमालटी ...	५ "
भटवाड़ी "भास्कर प्रयाग"	४ "
भुक्की ...	६ "
गङ्गनाणी ...	३ "
लवारी नाग ...	४ "
सुक्की १ मील चढ़ाई ...	५ "
झाला ...	३ "
हरसिल 'हरिप्रयाग'	२ "
धराली ...	३ "

जांगला यहां से २ मील आगे बांये हाथ को रास्ता थुलिंग मठ कैलास मान सरोवर होते हुए वापिस थुलिंग मठ से बद्रीनाथ जी को ७ रोज में जाता है।

भैरवघाटी	२॥	मील
श्री गङ्गोत्तरी पुरी	६॥	"
गङ्गोत्तरी से बूढ़ा केदार	६७	"
गङ्गोत्तरी से वापिस भटवाड़ी सिर्फ	३८	"
रास्ता बद्रीनाथ जी को		
मल्ला चट्टी ...	२	"
सौरा ...	३	"
फ्याल्टू ६ मील की चढ़ाई ...	३	"
छूणा " ...	३	"
वेलक " ...	४	"
पंगराना उतार ...	५	"
काला २ मील उतार ...	४	"
बूढ़ा केदार ...	५	"
बूढ़ा केदार से त्रियुगी नारायण	४१॥	"
" " भैरव चट्टी चढ़ाई	६॥	"
भौंट चट्टी	३	"
घुत्तू ...	९	"
पंवाली ...	३	"
मागू की मांडा ..	९	"
त्रियुगी नारायण ...	५	"
त्रियुगी से केदारनाथ	१३॥	"
त्रियुगीनारायण से गौरीकुण्ड	६	"

रामबाड़ा ...	१	मील
पुरी केदारनाथ ...	३	"
केदारनाथ से वापिस रामबाड़ा	२	"
गौरीकुण्ड ..	४	"
रामपुर ...	५	"
फाटा ..	५	"
नाला ...	५	"
ऊखीमठ ...	४	"
मौली ...	७॥	"
भीम ...	३॥	"
मंडल ...	६	"
गोपेश्वर ...	६	"
चमोली ...	३	"
सियासैण ...	७	"
पीपलकोटी ...	२	"
गरुड़ गङ्गा ...	४	"
पाताल गङ्गा ...	४	"
कुमार चट्टी ...	४॥	"
जोशीमठ ...	६॥	"
पांडुकेश्वर ...	८	"
हनुमान ...	६	"
बद्रीनारायण ...	३॥	"

नोट—उत्तराखन्ड यात्रा प्रायः अप्रैल शुरु वैसाख से अरम्भ ६ माह तक जारी रहती है अपना यथेष्ट प्रबन्ध कर चलना चाहिए।

डाकखाने—देवप्रयाग, मन्सूरी, टिहरी, भल्डियाना, धरासू, उत्तरकाशी, तृयुगीनारायण, बद्रीनाथ केदारनाथ आदि।

तारघर—मसूरी, टिहरी, बद्रीनाथ, चमोली, ऊखीमठ।

रास्ता जागला चट्टी से कैलास मानसरोवर होकर बद्रीनाथ जी को।

जागला से गंगोत्री ८ मील है और जागला से करचा पड़ाव करचा से नेलंग पड़ाव यहां व्योपारी जाड लोगों की बस्ती है नेलंग से सुनाम पड़ाव, सुनाम से पुलम सुम्दु अच्छा दृश्य है पुलम सुम्दु से झेलूखामा चढ़ाई के नीचे करीब ३ माल चढ़ाई और ३ उतराई होकर होप, होप से थोड़ा चढ़ता रास्ता फुलाला, फुलाला से पुलिंग मंडी व्यापारी तिब्बति मंडी, पुलिंग मंडी से सेखेरिया नदी, सेखेरिया से चापरुङ्ग मठ यहां पर बहुत सारे मंदिर दर्शनीय हैं चापरुङ्ग मठ व पुलिंग मठ जो तिब्बत का तीर्थ स्थान और बद्रीश का प्राचीन मंदिर है और श्री १०८ मन्दिर (गुन्दमा) है और यहां पर तिब्बत के राजा दलप लामा लासी की तर्फ से चाय और सत्तू का क्षेत्र भी है और २०० के करीब पुजारी (लामा) लोगों की बस्ती है। यहां से एक रास्ता ज्ञानिमा मंडी व कैलास मानसरोवर होते हुए कुमाऊं नैनीताल को चला जाता है और एक रास्ता श्री बद्रीनाथ धाम को जाता है।

इस प्रकार पुलिंग मठ से डोङ्ग, डोङ्ग सेजिम्बू पाखा जहां पर तिब्बत के जंगली जानवर विचित्र विचित्र सूरा गाय, राम घोड़ी, जंगली कुत्ते इत्यादि देखने में आते हैं दर्शनीय मैदान हैं जिम्बू थाखा से छोटा खागा, छोटा खागा से बड़ा खागा अलकनन्दा का मूल स्थान व एक दर्शनीय झील भी है और सामने बर्फ से ढके हुए पर्वत श्रेणी दृष्टि गोचर होते हैं। बड़ा खागा से शतो पंथ नाम पड़ाव जहां से पांडव स्वर्गारोहण को गये थे मार्ग से स्वर्गारोहण कैलास का दर्शन होता है शतोपंथ से गस्तोली पड़ाव मैदान होते हुए माणाग्राम यह व्यापारी (मार्छा) लोगों का ग्राम है यहां से श्री बद्रीनाथ जी २ मील की दूरी पर है।

नोट—कैलास यात्रा करने में छोलदारी गर्म ऊनी कपड़े स्टोभ (तेल का चूल्हा) क्योंकि वहां लकड़ी कम मिलती हैं तिब्बती लोग उपले मेगल से रसोई बनाते हैं व मेवा इत्यादि खाद्य पदार्थ विशेष उधर चाय का सेवन फायदेमन्द है थोड़ी बहुत दवा भी साथ ले जानी चाहिए पड़ाव ६।७ मील से ज्यादा दूरी पर नहीं हैं सामान बकरियों व थुलिंग मंडी से अल्प किराये पर घोड़े जहां जावे मिल सकते हैं।

पता—
पंडा काशीरामात्मज चौभय्या
मणिकर्णिका घाट उत्तरकाशी टिहरी गढ़वाल राज्य

92:41
JOS

9

वाल्मीकिविद्यापीठपुस्तकालयः

प्रत्यावर्तनतिथिः

Acc. No 912
Class No ... Book No ...
Author जोशी सुरतराम
Title उत्तरकाशी ... महात्म

Due on	Borrower's Name	Returned on

Q2:41
JOS

915

महेन्द्र संस्कृत विश्वविद्यालय
वाल्मीकि विद्यापीठ
पुस्तकालय

उपा